

يَأْتِيهَا النَّاسُ كُلُّوْا مِمَّا فِي الْأَرْضِ حَلَالًا طَيِّبًا وَلَا تَتَّبِعُوا
خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ ﴿١٦٨﴾ إِنَّمَا يَأْمُرُكُمْ
بِالسُّوْءِ وَالْفَحْشَاءِ وَأَنْ تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿١٦٩﴾
وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ اتَّبِعُوا مَا أَنْزَلَ اللَّهُ قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا أَلْفَيْنَا
عَلَيْهِ ءَابَاءَنَا أَوْلَوْ كَانَ ءَابَاؤُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ شَيْئًا وَلَا
يَهْتَدُونَ ﴿١٧٠﴾ وَمَثَلُ الَّذِينَ كَفَرُوا كَمَثَلِ الَّذِي يَنْعِقُ بِمَا لَا
يَسْمَعُ إِلَّا دُعَاءً وَنِدَاءً صُمُّ بُكُمْ عُمَىٰ فَهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٧١﴾
يَأْتِيهَا الَّذِينَ ءَامَنُوا كُلُّوْا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ
وَأَشْكُرُوا لِلَّهِ إِنْ كُنْتُمْ إِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١٧٢﴾ إِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمْ
الْمَيْتَةَ وَالْدَّمَ وَحُمَ الْخَنِزِيرِ وَمَا أَهْلَ بِهِ لغيرِ اللَّهِ فَمَنْ
أَضْطَرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ
رَّحِيمٌ ﴿١٧٣﴾ إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنْزَلَ اللَّهُ مِنَ الْكِتَابِ
وَيَشْتَرُونَ بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا أُولَئِكَ مَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ
إِلَّا النَّارَ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللَّهُ يَوْمَ الْقِيَمَةِ وَلَا يُزَكِّيهِمْ وَلَهُمْ
عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿١٧٤﴾ أُولَئِكَ الَّذِينَ اشْتَرُوا الضَّلَالََةَ بِالْهُدَىٰ
وَالْعَذَابُ بِالْمَغْفِرَةِ فَمَا أَصْبَرَهُمْ عَلَى النَّارِ ﴿١٧٥﴾ ذَلِكَ بِأَنَّ اللَّهَ
نَزَلَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ وَإِنَّ الَّذِينَ اخْتَلَفُوا فِي الْكِتَابِ لَفِي
شِقَاقٍ بَعِيدٍ ﴿١٧٦﴾

Theme

| | |
|--|---|
| <p>Do not follow the footsteps of Shaitān. Do not profess the faith blindly. Prohibited (Harām) food. Those who hide the truth for worldly gains swallow nothing but fire.</p> | <p>शैतान के नक्श-ए-क़दम पर न चलो। अंधी तक्लीद में ईमान का दावा न करो। हराम खाने की चीज़ें। जो लोग दुनियावी फ़ायदे के लिए हक़ को छुपाते हैं, वह अपने पेट में आग ही भरते हैं।</p> |
|--|---|

Tarjumani

| | |
|---|---|
| <p>O Mankind! Eat of what is lawful and clean on the earth and do not follow the footsteps of Shaitan, surely, he is your open enemy. He enjoins you to commit evil and indecency, and to say certain things against Allah about which you have no knowledge. When it is said to them: "Follow what Allah has revealed." They reply: "Nay! We will follow what our forefathers practiced." Well! Even if their forefathers had no sense at all and lacked guidance? The parable of those who reject faith is like cattle which, call out to them as one may, hear nothing but a shout and a cry since they are unable to understand, they are deaf,</p> | <p>लोगो! ज़मीन में जो हलाल और पाक चीज़ें हैं उन्हें खाओ और शैतान के बताए हुए रास्तों पर न चलो वह तुम्हारा खुला दुश्मन है, तुम्हें बदी और फुहश का हुक्म देता है और यह सिखाता है कि तुम अल्लाह के नाम पर वे बातें कहो जिनके मुताल्लिक तुम्हें इल्म नहीं है कि (वे अल्लाह ने फ़रमाई हैं) इनसे जब कहा जाता है कि अल्लाह ने जो अहकाम नाज़िल किए हैं उनकी पैरवी करो तो ज़वाब देते हैं कि हम तो उसी तरीक़े की पैरवी करेंगे जिसपर हमने अपने बाप-दादा को पाया है अच्छा अगर इनके बाप-दादा ने अक्ल से कुछ भी काम न लिया हो और राहे-रास्त न पाई हो तो क्या फिर भी ये उन्हीं की पैरवी किए चले जाएँगे? ये लोग जिन्होंने ख़ुदा के बताए हुए तरीक़े पर</p> |
|---|---|

dumb, blind, and understand nothing. O believers! Eat the clean things which We have provided you and give thanks to Allah, if you worship only Him. He has forbidden you to eat dead meat, blood, the flesh of swine, and that on which any name other than Allah has been invoked; but, if someone is compelled by absolute necessity, intending neither to sin nor to transgress, they shall incur no sin. Surely, Allah is Forgiving, Merciful. Surely, those who conceal any part of the Book which Allah has revealed and sell His revelations for a petty price (material gain), swallow nothing but fire into their bellies. On the Day of Resurrection, Allah will neither speak to them nor purify them and they shall have painful punishment. These are the kind of people who barter guidance for error and forgiveness for punishment. How patient are they, to reach Hell fire! Their doom is because Allah has

चलने से इनकार कर दिया है, इनकी हालत बिल्कुल ऐसी है जैसे चरवाहा जानवरों को पुकारता है और वे हाँक-पुकार की सदा के सिवा कुछ नहीं सुनते | ये बहरे हैं, गूंगे हैं, अँधे हैं, इसलिए कोई बात इनकी समझ में नहीं आती | ऐ लोगो! जो ईमान लाए हो, अगर तुम हक़ीकत में अल्लाह ही की बन्दगी करनेवाले हो तो जो पाक चीज़ें हमने तुम्हें बख़शी हैं उन्हें बेतकल्लुफ़ खाओ और अल्लाह का शुक्र अदा करो | अल्लाह की तरफ़ से अगर कोई पाबन्दी तुमपर है तो वह यह है कि मुर्दार न खाओ, खून से और सूअर के गोश्त से परहेज़ करो, और कोई ऐसी चीज़ न खाओ जिसपर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो | हाँ, जो शख्स मज़बूरी की हालत में हो और वह इनमें से कोई चीज़ खा ले बग़ैर इसके कि वह कानून-शिकनी का इरादा रखता हो या ज़रूरत की हद से तजावुज़ करे तो उसपर कुछ गुनाह नहीं, अल्लाह बख़शनेवाला और रहम करनेवाला है। हक़ यह है कि जो लोग उन अहकाम को छिपाते हैं जो अल्लाह ने अपनी किताब में नाज़िल किए हैं और थोड़े-से दुनियावी फ़ायदों पर उन्हें भेंट चढ़ाते हैं, वे दरअसल अपने पेट आग

| | |
|---|--|
| <p>revealed the Book with the truth; surely, those who argue about the Book (the Quran) are in extreme schism (divergence).</p> | <p>से भर रहे हैं कियामत के रोज़ अल्लाह हरगिज़ उनसे बात न करेगा, न उन्हें पाकीज़ा ठहराएगा, और उनके लिए दर्दनाक सज़ा है ये वे लोग हैं जिन्होंने हिदायत के बदले ज़लालत ख़रीदी और मग़फ़िरत के बदले अज़ाब मोल ले लिया कैसा अजीब है इनका हौसला कि जहन्नम का अज़ाब बर्दाश्त करने के लिए तैयार हैं यह सब कुछ इस वजह से हुआ कि अल्लाह ने तो ठीक-ठीक हक़ के मुताबिक़ किताब नाज़िल की थी, मगर जिन लोगों ने किताब में इख़तिलाफ़ात निकाले वे अपने झगड़ों में हक़ से बहुत दूर निकल गए।</p> |
|---|--|

Tafsir

| | |
|---|--|
| <p>Mankind! eat what is good and lawful on the earth. And do not follow in the footsteps of Shayṭān. He truly is an outright enemy to you. [2:168]</p> | <p>"ऐ इंसानो! ज़मीन में जो कुछ हलाल और पाकीज़ा है, उस में से खाओ, और शैतान के नक्शे-क़दम पर न चलो। बेशक वह तुम्हारा खुला दुश्मन है। [2:168]"</p> |
| <p>Mankind!</p> | <p>ऐ इंसानो!</p> |
| <p>It is said that this was revealed about the tribes of Thaqīf, Khuza‘ah and Banū Mudlij about the blessings which they</p> | <p>कहा जाता है कि यह आयत क़बीला-ए-सक़ीफ़, ख़ुज़ाअह और बनू मुदलिज के बारे में नाज़िल हुई थी,</p> |

| | |
|--|--|
| <p>denied themselves, but the words bear a general meaning.</p> | <p>उन नेमतों के मुतअल्लिक जिन्हें उन्होंने खुद अपने ऊपर हराम कर लिया था, लेकिन उसके अल्फ़ाज़ आम मानी रखते हैं।</p> |
| <p>eat what is good and lawful on the earth.</p> | <p>ज़मीन में जो कुछ पाकीज़ा और हलाल है, उस में से खाओ।</p> |
| <p>‘Ṭayyib’ (good) here means “lawful” and this is emphasised by the use of the actual legal term (ḥalāl) immediately after it. This is the position of Mālik about ‘good’. Ash-Shāfi‘ī said that it means ‘pleasant and wholesome’ which is why he forbade feeding animals filth. Allah willing, this will be dealt with in greater depth in Sūrat al-An‘ām and Sūrat al-A‘rāf.</p> | <p>‘तय्यिब’ (अच्छी और पाक) से यहाँ मुराद “हलाल” है, और इसके फ़ौरन बाद अस्ल क़ानूनी लफ़्ज़ (हलाल) के इस्तेमाल से इसी बात पर ज़ोर दिया गया है। ‘अच्छी’ के बारे में इमाम मालिक का यही मौक़िफ़ है। इमाम शाफ़ई ने कहा कि इससे मुराद “पसंदीदा और पाकीज़ा” है, इसी वजह से उन्होंने जानवरों को गंदगी खिलाने से मना किया। इं शा अल्लाह, इस पर सूरह अल-अनआम और सूरह अल-आराफ़ में मजीद तफ़्सील से बहस की जाएगी।</p> |
| <p>The term ‘ḥalāl’ (lawful) is called that because the bond of prohibition has been released (inḥilāl) from it. Sahl ibn ‘Abdullāh said, ‘Salvation lies in three things: consuming the ḥalāl, performing the obligations and imitation of the Prophet ﷺ.’ Abū ‘Abdullāh as-</p> | <p>लफ़्ज़ “हलाल” (जायज़) को यह नाम इसलिए दिया गया है कि इससे हु़रमत की गिरह खोल दी गई है (इनहिलाल)। सहल बिन अब्दुल्लाह ने कहा: “नजात तीन चीज़ों में है: हलाल खाना, फ़राइज़ अदा करना और नबी ﷺ की पैरवी करना।” अबू अब्दुल्लाह अस-साजी, सईद बिन</p> |

Sāji, Sa‘īd ibn Yazīd, said, ‘There are five qualities which complete knowledge: gnosis of Allah Almighty, recognition of the truth, sincere action for Allah, acting according to the Sunnah and consuming the ḥalāl. If even one of them is lacking, the action is not complete.’ Sahl said, ‘Eating the ḥalāl is only valid with knowledge, and wealth is not ḥalāl until it is free of six things: usury, the ḥarām, theft, usurpation, the disliked and the doubtful.’

यज़ीद ने कहा: “पाँच सिफ़ात ऐसी हैं जो इल्म को मुकम्मल करती हैं: अल्लाह तआला की मआरिफ़त, हक़ की पहचान, अल्लाह के लिए इख़लास के साथ अमल, सुन्नत के मुताबिक़ अमल करना और हलाल खाना। अगर इनमें से एक भी न हो तो अमल मुकम्मल नहीं होता।” सहल ने कहा: “हलाल खाना इल्म के साथ ही दुरुस्त होता है, और माल उस वक़्त तक हलाल नहीं होता जब तक वह छह चीज़ों से पाक न हो: सूद, हराम, चोरी, ग़सब, मकरूह और मुशतबह उमूर से।”

And do not follow in the footsteps of Shayṭān.

और शैतान के नक़शे-क़दम पर न चलो।

It is possible that the word ‘khuṭuwāt’ (footsteps) comes from khaṭī’ah (error). The majority say that the phrase means: ‘Do not follow the actions of Shayṭān.’ As-Suddī said that it means: ‘do not obey him.’ The sound position is that it is general to all customs and laws stemming from innovations and acts of

मुमकिन है कि लफ़ज़ ‘ख़ुतुवात’ (क़दमों के निशान / नक़शे-क़दम) का माद्दा ‘ख़तीअह’ (ग़लती) से हो। ज़महूर के नज़दीक़ इस जुम्ले का मतलब यह है: “शैतान के आमाल की पैरवी न करो।” अस-सुद्दी ने कहा कि इससे मुराद है: “उसकी इताअत न करो।” दुरुस्त बात यह है कि यह हर उस रस्म-ओ-रिवाज और क़ानून के लिए आम है जो बिदअतों और नाफ़रमानी के कामों से पैदा हो।

disobedience.

He truly is an outright enemy to you.

बेशक वह तुम्हारा खुला दुश्मन है।

Allah reports that Shayṭān is an enemy and His report is true. An intelligent person must be cautious about this enemy whose enmity has been clear from the time of Ādam and who has devoted his energy to corrupting the states of mankind. For this reason Allah commanded us to be on our guard against him in many places in the Qur'an. 'Abdullāh ibn 'Umar said, 'Iblīs is confined to the lower earth. When he moves, every evil in the earth between two or more people is set in motion.' At-Tirmidhī transmitted from Abū Mālik al-Ash'arī: 'I command you to remember Allah. An example of that is when a man has an enemy rapidly following his tracks and then reaches a fortified fortress and defends himself from him. Similarly the only thing that protects a person from Shayṭān is

अल्लाह तआला ख़बर देते हैं कि शैतान दुश्मन है, और उसकी दी हुई यह ख़बर बिल्कुल सच्ची है। एक अक्लमंद शख्स के लिए लाज़िम है कि वह इस दुश्मन से होशियार रहे जिसकी दुश्मनी हज़रत आदम के ज़माने से ज़ाहिर है और जिसने इंसानों के हालात को बिगाड़ने में अपनी पूरी कुव्वत लगा दी है। इसी लिए अल्लाह तआला ने हमें कुरआन में मुख़लिफ़ मक़ामात पर उससे बचने का हुक्म दिया है। अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि.) ने फ़रमाया: "इब्लीस ज़मीन के निचले हिस्से में कैद है। जब वह हरकत करता है तो ज़मीन में दो या ज़्यादा लोगों के दरमियान हर क़िस्म की बुराई को भड़काता है।" इमाम तिर्मिज़ी ने अबू मालिक अल-अशअरी (रज़ि.) से रिवायत किया है: "मैं तुम्हें अल्लाह के ज़िक्र का हुक्म देता हूँ। उसकी मिसाल ऐसी है जैसे एक शख्स के पीछे दुश्मन तेज़ी से लगा हो, फिर वह एक मज़बूत क़िले में पहुँच कर उससे अपनी हिफ़ाज़त कर ले। इसी

| | |
|--|--|
| <p>remembering Allah.’ He said that it is a gharīb sound ḥasan ḥadīth.</p> | <p>तरह इंसान को शैतान से बचाने वाली चीज़ सिर्फ़ अल्लाह का ज़िक्र है।” उन्होंने कहा कि यह हदीस ग़रीब, सहीह और हसन है।</p> |
| <p>He only commands you to do evil and indecent acts and to say about Allah what you do not know. [2:169]</p> | <p>वह तो तुम्हें सिर्फ़ बुराई और बेहयाई का हुक्म देता है, और यह कि तुम अल्लाह के बारे में वह बातें कहो जिनका तुम्हें इल्म नहीं। [2:169]</p> |
| <p>He only commands you to do evil and indecent acts</p> | <p>वह तो तुम्हें सिर्फ़ बुराई और बेहयाई का हुक्म देता है।</p> |
| <p>The word for evil is sū’ because it is bad for the person who does it and brings evil consequences in its wake. The root of the word for indecent acts (faḥshā’) means something which is ugly to look at. Sharī‘ah is what makes something good or ugly. All that the Sharī‘ah forbids is ugly and so it is part of the indecent. Muqātil said, ‘Everywhere the Qur’an mentions “indecency” it implies fornication except where Allah says: “Shayṭān promises you poverty and commands you to avarice (faḥshā’),” (2:268) where it</p> | <p>बुराई के लिए जो लफ़्ज़ सू’ आया है, उसे यह नाम इसलिए दिया गया है कि वह करने वाले के लिए खुद भी बुरा होता है और अपने पीछे बुरे नताइज भी छोड़ता है। और फ़हशा (बेहयाई / बदकारी) के लफ़्ज़ की अस्ल का मानी ऐसी चीज़ है जिसे देखना भी बदसूरत और नागवार हो। शरीअत ही यह तय करती है कि कौन सी चीज़ अच्छी है और कौन सी बदसूरत। पस जिस चीज़ से शरीअत ने मना किया है, वह सब क़बीह है, और इसी लिए वह फ़हशा के दायरे में दाख़िल है। मुक़ातिल ने कहा: “क़ुरआन में जहाँ कहीं भी फ़हशा का ज़िक्र आया है, उससे मुराद ज़िना है,</p> |

means to refuse to pay zakat.’

सिवाए उस मक़ाम के जहाँ अल्लाह तआला फ़रमाते हैं: ‘शैतान तुम्हें मुहताजी का वादा देता है और तुम्हें फ़हशा का हुक्म देता है’ (2:268), वहाँ इससे मुराद ज़कात अदा करने से इंकार है।”

According to this, there is no ḥadd for ‘evil’, but there is for ‘indecent’. That is related from Ibn ‘Abbās and others, and Allah knows best.

इसके मुताबिक़, सू (बुराई) पर कोई हद मुकर्रर नहीं, लेकिन फ़हशा (बेहयाई / बदकारी) पर हद है। यह बात इब्न अब्बास (रज़ि.) और दीगर हज़रात से मनकूल है, और अल्लाह ही बेहतर जानता है।

and to say about Allah what you do not know.

और यह कि तुम अल्लाह के बारे में वह बातें कहो जिनका तुम्हें इल्म नहीं।

At-Ṭabarī says that this refers to various animals, like baḥīrah, sā’ibah and other such animals which the idolaters made unlawful without any basis for doing so.

इमाम तबरी फ़रमाते हैं कि इससे मुराद मुख्तलिफ़ किस्म के वह जानवर हैं, जैसे बहीरा, साइबा और इसी तरह के दूसरे जानवर, जिन्हें मुशरिकीन ने बिना किसी दलील और बुनियाद के ख़ुद ही हराम करार दे रखा था।

When they are told, ‘Follow what Allah has sent down to you,’ They say, ‘We are following what we found our fathers doing.’ What, even

जब उनसे कहा जाता है: “उसकी पैरवी करो जो अल्लाह ने तुम्हारी तरफ़ नाज़िल किया है”, तो वह कहते हैं: “हम तो उसी की पैरवी करेंगे जिस पर हमने अपने बाप-

| | |
|--|--|
| <p>though their fathers did not understand a thing and were not guided! [2:170]</p> | <p>दादा को पाया है।” क्या, अगरचे उनके बाप-दादा कुछ भी न समझते थे और न ही हिदायतयाफ़्ता थे! [2:170]</p> |
| <p>When they are told, ‘Follow what Allah has sent down on you,’</p> | <p>जब उनसे कहा जाता है: “उसकी पैरवी करो जो अल्लाह ने तुम्हारी तरफ़ नाज़िल किया है।”</p> |
| <p>It is generally held that it is the unbelieving Arabs who are being addressed here but Ibn ‘Abbās said that it was revealed about the Jews. At-Ṭabarī said that the pronoun refers back to ‘mankind’ in the last-but-one āyah. Following implies both acceptance and action. ‘Follow’ is to accept and act accordingly.</p> | <p>आम तौर पर यह समझा जाता है कि यहाँ ख़िताब काफ़िर अरबों से है, लेकिन इब्न अब्बास (रज़ि.) ने कहा कि यह आयत यहूदियों के बारे में नाज़िल हुई थी। इमाम तबरी ने कहा कि इसमें ज़मीर पिछली से एक पहले वाली आयत में मज़कूर “लोगों” की तरफ़ लौटती है। “पैरवी” में क़बूल करना और उसके मुताबिक़ अमल करना दोनों शामिल हैं। “पैरवी करो” का मतलब है उसे क़बूल करना और उस पर अमल करना।</p> |
| <p>They say, ‘We are following what we found our fathers doing.’</p> | <p>वह कहते हैं: “हम तो उसी की पैरवी करेंगे जिस पर हमने अपने बाप-दादा को पाया है।”</p> |
| <p>The strength of the expression of this āyah would seem, on the surface, to challenge the whole matter of taqlīd, which is the acceptance of an inherited</p> | <p>बज़ाहिर इस आयत के अल्फ़ाज़ की कुव्वत पूरे तक़लीद के मसले को चैलेंज करती हुई महसूस होती है, यानी ऐसे मौरूसी मौक्किफ़ को इख़्तियार करना जिसे बिना सवाल</p> |

position without calling it into question, and there are other āyahs which have the same import. This āyah and the ones like it, however, are connected to what came before them. That is because Allah informs us about the ignorance of the Arabs in judging by their superstitious customs concerning animals like baḥīrah, sā'ibah and waṣīlah, using as evidence the fact that their fathers did that, and the command to abandon such customs was revealed by Allah to His Messenger.

किए क़बूल कर लिया जाए, और इसी मफ़हूम की दूसरी आयात भी मौजूद हैं। लेकिन यह आयत और इस जैसी दूसरी आयात अपने माक़बल सियाक़ से जुड़ी हुई हैं। इसकी वजह यह है कि अल्लाह तआला हमें अरबों की उस जहालत से आगाह करते हैं कि वह बहीरा, साइबा और वसीला जैसे जानवरों के बारे में अपने वहमी और जाहिलाना रुसूम के मुताबिक़ फ़ैसला करते थे, और उसके सुबूत के तौर पर सिर्फ़ यह पेश करते थे कि उनके बाप-दादा भी यही करते थे। फिर इन रुसूम को छोड़ने का हुक्म अल्लाह तआला ने अपने रसूल पर नाज़िल फ़रमाया।

Some people, however, believe that this āyah censures taking the position of taqlīd since Allah Almighty censures the unbelievers for following their fathers in falsehood and imitating them in disbelief and disobedience. This is sound where falsehood is concerned. As for taqlīd in respect of the truth, it is one of the principles of the dīn and is a protection for the Muslims to which

बाज़ लोगों का यह भी ख़याल है कि यह आयत तक़लीद के मौक़िफ़ की मज़म्मत करती है, क्योंकि अल्लाह तआला ने काफ़िरों को इस बात पर मलामत की है कि वह अपने बाप-दादा की बातिल में पैरवी करते थे और कुफ़्र और नाफ़रमानी में उनकी नक़ाली करते थे। यह बात बातिल के मामले में बिलकुल दुरुस्त है। लेकिन जहाँ हक़ में तक़लीद का तअल्लुक़ है, तो वह दीन के उसूलों में से एक उसूल है और मुसलमानों के लिए एक

unlearned people who are unqualified to make rulings about matters of the dīn should have recourse. Scholars disagree about the permissibility of taqlīd in matters of uṣūl (basic principles), as will be discussed, but it is universally permitted in respect of secondary rulings.

हिफ़ाज़ती सहारा है, जिसकी तरफ़ वह ग़ैर-आलिम लोग रुजूअ करें जो दीनी मसाइल में खुद हुक्म निकालने की अहलियत नहीं रखते। उलमा ने उसूल-ए-दीन (बुनियादी अक्लाइद व उसूल) में तक़लीद के जवाज़ के बारे में इख़्तिलाफ़ किया है, जैसा कि आगे ज़िक्र होगा, लेकिन फुरूई अहकाम (सानवी / अमली मसाइल) में तक़लीद के जवाज़ पर उमूमी इत्तिफ़ाक़ पाया जाता है।

According to scholars, the reality of taqlīd is to accept a position without evidence. Accordingly, someone who accepts the Prophet ﷺ without looking at his miracles would be a muqallid. Someone who looks into them would not be. It is said that it is believing in the soundness of the fatwas of someone when the soundness of his position is not known. It is derived from the qilādah or halter of the camel, which is when a rope is placed around its neck so that it can be led anywhere.

उलमा के नज़दीक तक़लीद की हक़ीक़त यह है कि किसी मौक़िफ़ को बग़ैर दलील के क़बूल कर लिया जाए। इसी बुनियाद पर, जो शख्स नबी ﷺ को आपके मोजिज़ात में ग़ौर किए बग़ैर मान ले, वह मुक़ल्लिद होगा, और जो उनमें ग़ौर व तहक़ीक़ करे, वह मुक़ल्लिद नहीं होगा। यह भी कहा गया है कि तक़लीद यह है कि किसी शख्स के फ़तवे की सिहहत पर ईमान रखा जाए जबकि उसके मौक़िफ़ की दुरुस्ती खुद मालूम न हो। लफ़ज़ तक़लीद, क़िलादा (ऊँट के गले में डाली जाने वाली रस्सी / पट्टा) से माखूज़ है, यानी ऐसी रस्सी जो उसके गले में डाल दी जाए ताकि उसे जहाँ चाहें ले जाया जा

| | |
|--|--|
| | <p>सके।</p> |
| <p>Taqlīd is not a means to knowledge nor does it reach it, either in respect of basic principles or secondary rulings. That is the position of the majority of intelligent people and scholars, as opposed to what is related from the ignorant Ḥashwiyyah and Tha‘ālibiyyah who claim that taqlīd is the sole means to recognise the truth and that it is mandatory, and that investigation and consideration are ḥarām.</p> | <p>तक़लीद न तो इल्म हासिल करने का ज़रिया है और न ही वह बि-ज़ात-ए-ख़ुद यक़ीनी मआरिफ़त तक पहुँचाती है, चाहे मामला उसूल (बुनियादी अक़ाइद व उसूल) का हो या फ़ुरूअ (सानवी / अमली अहकाम) का। यही मौक़िफ़ अक्सर अहल-ए-अक़ल और जम्हूर उलमा का है, बरख़िलाफ़ उस बात के जो बाज़ जाहिल हशविyyा और सआलिबिyyा से मनकूल है, जो यह दावा करते हैं कि हक़ को पहचानने का वाहिद ज़रिया तक़लीद ही है, और यह कि वह वाजिब है, जबकि तहक़ीक़ और ग़ौर व फ़िक़्र हराम हैं।</p> |
| <p>The obligation for the common person, who is not able to deduce rulings from basic principles because he is not qualified to do so on account of his lack of knowledge of the dīn, is to head for the person with the most knowledge in his time and his land and ask him about his problem and follow his fatwā since Allah says: <i>‘Ask the people of the Reminder if you do not know.’</i> (16:43) He</p> | <p>जो आम आदमी दीनी उसूल से ख़ुद अहकाम अख़ज़ करने की सलाहियत नहीं रखता, क्योंकि वह इल्म-ए-दीन में उस दर्जे का अहल नहीं होता, उस पर लाज़िम है कि वह अपने ज़माने और अपने इलाके में सबसे ज़्यादा इल्म रखने वाले शख़्स की तरफ़ रुजूअ करे, अपने मसले के बारे में उससे सवाल करे, और उसके फ़तवे की पैरवी करे। क्योंकि अल्लाह तआला ने फ़रमाया है: “अगर तुम नहीं जानते तो अहल-ए-ज़िक़्र से पूछ</p> |

uses ijtihād in finding the most knowledgeable of the people of his time by investigating until he is satisfied that he has found the man whom most people agree to be the most learned. A scholar must also imitate a scholar who has a similar standing to him in a case in which he does not find the solution through evidence and his own investigation. Qāḍī Abū Bakr and a group of established scholars believed that.

लो” (16:43)। वह अपने ज़माने के सबसे ज़्यादा आलिम शख्स को पहचानने में इज्तिहाद करे, यानी तहक़ीक़ व तलाश के ज़रिए यहाँ तक इत्मीनान हासिल करे कि यही वह शख्स है जिसे अक्सर लोग सबसे ज़्यादा इल्म वाला मानते हैं। इसी तरह एक आलिम भी बाज़ सूरतों में अपने ही दर्जे के दूसरे आलिम की तक़लीद कर सकता है, जब वह किसी मसले का हल दलील और अपनी तहक़ीक़ के ज़रिए खुद न पा सके। क़ाज़ी अबू बक्र और एक जमाअत-ए-मुतबर उलमा का यही मौक़िफ़ था।

Ibn ‘Aṭīyyah said, ‘The Community agrees that taqlīd in respect of articles of faith is invalid.’ Others, however, stated that there is disagreement about that, like Qāḍī Abū Bakr ibn ‘Arabī and Abū ‘Amr ‘Uthmān Ibn Dirbās. In *al-Intiṣār*, Ibn Dirbās said, ‘Some people permit taqlīd in respect of tawḥīd, but this is shown to be wrong by the words of Allah: “*We found our fathers following a religion*”

इब्र अतिय्या ने कहा: “उम्मत का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि अक़ाइद के बाब में तक़लीद दुरुस्त नहीं।” ताहम बाज़ दूसरे अहल-ए-इल्म ने कहा है कि इस मसले में इख़्तिलाफ़ मौजूद है, जैसे क़ाज़ी अबू बक्र इब्र अरबी और अबू अम्र उस्मान इब्र दिरबास। इब्र दिरबास ने अपनी किताब अल-इन्तिसार में कहा: “बाज़ लोग तौहीद के बाब में तक़लीद को जायज़ करार देते हैं, लेकिन उसके बुल्लान पर अल्लाह तआला का यह फ़रमान दलालत करता है: ‘हमने अपने बाप-

(43:23), so He censured their imitation of their fathers and not following the Messenger, and this is just what the followers of sects do when they imitate their great men and do not follow the dīn of Muḥammad ﷺ. It is an obligation for every responsible person to learn tawḥīd and proper understanding of it. That can only be obtained through the Book and the Sunnah as we made clear. Allah guides whomever He wills.’

दादा को एक दीन पर पाया’ (43:23)। चुनाँचे अल्लाह तआला ने उनके बाप-दादा की अंधी पैरवी और रसूल की इत्तिबा न करने पर उनकी मज़म्मत फ़रमाई, और यही काम फ़िक्रों के पैरोकार करते हैं, जब वह अपने बड़ों की तक्लीद करते हैं और मुहम्मद ﷺ के दीन की पैरवी नहीं करते। हर मुकल्लफ़ शख्स पर लाज़िम है कि वह तौहीद को सीखे और उसकी सही समझ हासिल करे। और यह चीज़ सिर्फ़ किताब व सुन्नत के ज़रिए ही हासिल हो सकती है, जैसा कि हम वाज़ेह कर चुके हैं। अल्लाह जिसे चाहता है हिदायत देता है।”

Ibn Dirbās also said, ‘Many of the people who follow sects say that those who cling to the Book and Sunnah are imitators. This is an error on their part. This designation is more applicable to them, and their scholars are less able since they turn to the position of their masters and great men in their deviation from the Book of Allah and the Sunnah of His Messenger and the consensus

इब्र दिरबास ने यह भी कहा: “बहुत से फ़िक्र-परस्त लोग यह कहते हैं कि जो लोग किताब व सुन्नत को मज़बूती से थामते हैं, वह मुकल्लिद हैं। यह उनकी ग़लती है। दरहक़ीक़त यह लक़ब ख़ुद इन्हीं पर ज़्यादा सादिक़ आता है, और उनके उलमा तो इससे भी ज़्यादा इसके मुस्तहिक्क़ हैं, क्योंकि वह अल्लाह की किताब, उसके रसूल ﷺ की सुन्नत, और सहाबा (रज़ि.) के इज्मा से हट कर अपने बुजुर्गों और पेशवाओं के अक़वाल की तरफ़

of the Companions. So they are included among those whom Allah censures when He says: *“Our Lord, we obeyed our masters and great men...”* (33:67) and: *“We found our fathers following a religion and we are simply following in their footsteps.”* (43:23) Then He said to His Prophet ﷺ: *“Say: ‘What if I have come with better guidance than what you found your fathers following?’ They say, ‘We reject what you have been sent with.’”* Then He says to His Prophet ﷺ: *“We took revenge on them.”* (43:25)

रुजूअ करते हैं। पस वह उन लोगों में शामिल हैं जिनकी मज़म्मत अल्लाह तआला ने इन अल्फ़ाज़ में फ़रमाई: 'ऐ हमारे रब! हमने अपने सरदारों और अपने बड़ों की इताअत की...' (33:67), और: 'हमने अपने बाप-दादा को एक दीन पर पाया और हम तो उन्हीं के नक्शे-क़दम पर चल रहे हैं' (43:23)। फिर अल्लाह तआला ने अपने नबी ﷺ से फ़रमाया: 'कह दो: अगर मैं तुम्हारे पास उससे बेहतर हिदायत लेकर आया हूँ जिस पर तुमने अपने बाप-दादा को पाया था? वह कहते हैं: 'जो कुछ तुम देकर भेजे गए हो, हम उसके मुनकिर हैं।' फिर अल्लाह तआला ने फ़रमाया: 'तो हमने उनसे इंतिक़ाम लिया।' (43:25)"

‘So Allah made it clear that guidance lies in what His Messengers brought. It is not what the people of tradition say in their creed: “We found our imams, fathers and people taking the Book, Sunnah and consensus of the righteous Salaf of the community saying, ‘We found our fathers and obeyed our leaders and great

“पस अल्लाह तआला ने वाज़ेह कर दिया कि हिदायत उसी में है जो उसके रसूल लेकर आए। यह वह बात नहीं जो अहल-ए-तक़लीद अपने अक़ीदे में कहते हैं: 'हमने अपने आइम्मा, बाप-दादा और लोगों को किताब, सुन्नत और सालिह सलब के इज्मा पर यह कहते हुए पाया कि हमने अपने बाप-दादा को एक रास्ते पर पाया और अपने सरदारों और

men on a path.” That is because these ascribe that to Revelation and following the Messenger, and those ascribe their lies to the people of falsehoods and are increased in misguidance by that. Do you not see that Allah praised Yūsuf in the Qur’an when he said: *“I have left the religion of a people who do not believe in Allah nor do they have faith in the Next World. I have followed the religion of my forebears, Ibrāhīm, Ishāq and Ya‘qūb. We do not associate anything with Allah. That is part of Allah’s favour to us and to all mankind.”* (12:37–38) That is because his forefathers were Prophets who followed the Revelation, the pure Dīn with which Allah is pleased. Their forefathers’ following it is praised. In what they brought, there is no mention of ‘non-essentials’ being connected to ‘substances’ and being changed in them. It indicates that there is no guidance in them.’

बड़ों की इताअत की।’ इसकी वजह यह है कि यह लोग अपनी बात को वही और रसूल की पैरवी की तरफ़ मंसूब करते हैं, जबकि वह लोग अपनी झूटी बातों को अहल-ए-बातिल की तरफ़ मंसूब करते हैं और उसी के ज़रिए मज़ीद गुमराही में बढ़ जाते हैं। क्या तुम नहीं देखते कि अल्लाह तआला ने कुरआन में हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) की तारीफ़ फ़रमाई जब उन्होंने कहा: ‘मैंने उस क़ौम के दीन को छोड़ दिया है जो अल्लाह पर ईमान नहीं रखती और न आख़िरत पर यक़ीन रखती है। और मैंने अपने आबा-ओ-अजदाद—इब्राहीम, इस्हाक़ और याक़ूब—के दीन की पैरवी की है। हम अल्लाह के साथ किसी को शरीक नहीं ठहराते। यह अल्लाह का हम पर और तमाम लोगों पर फ़ज़ल है।’ (12:37–38)। यह इस लिए कि उनके आबा-ओ-अजदाद अंबिया थे जो वही की पैरवी करते थे, वह ख़ालिस दीन जिससे अल्लाह राज़ी है। लिहाज़ा उनके आबा-ओ-अजदाद की पैरवी क़ाबिल-ए-तारीफ़ है। और जो कुछ वह लेकर आए, उसमें यह बात नहीं कि ग़ैर-ज़रूरी उमूर को अस्ल हक़ाइक़ के साथ जोड़ कर उनमें

| | |
|---|---|
| | <p>तब्दीली की जाए। इससे वाज़ेह होता है कि उन (बातिल तरीक़ों) में कोई हिदायत नहीं है।”</p> |
| <p>Ibn al-Ḥaṣṣār said, ‘This began to be discussed in the reign of al-Ma’mūn, after 200 AH when the early books were translated and there was disagreement in them about the timelessness or contingency of the world. They disagreed about substance (jawhar) and its stability and the non-essential (‘araḍ) and its quiddity. Innovators, those in whose hearts was deviance, hastened to memorise those technical terms and with them they intended to impose foreign terms on the people of the Sunnah and to engender doubts among the weak people of this religion. This continued until innovation appeared and the innovators became a party. The sulṭān became confused about these matters until it reached the point where the ruler proclaimed that the Qur’an was created and compelled people to adopt that position and</p> | <p>इब्र अल-हस्सार ने कहा: “इस बहस की इब्तिदा मामून के दौर-ए-हुकूमत में, 200 हिजरी के बाद हुई, जब इब्तिदाई फ़लसफ़ियाना किताबों का तर्जुमा किया गया और उनमें दुनिया के क़दीम या हादिस होने के बारे में इख़्तिलाफ़ात पाए गए। इसी तरह उन्होंने जौहर और उसके सबात, और अरज़ और उसकी हक़ीक़त (माहियत) के बारे में भी इख़्तिलाफ़ किया। बिदअती लोग, जिनके दिलों में कज़ी थी, जल्दी से इन फ़र्नी और इस्तिलाही अल्फ़ाज़ को याद करने लगे, और उनके ज़रिए उनका मक़सद यह था कि अहल-ए-सुन्नत पर अजनबी इस्तिलाहात मुसल्लत करें और इस दीन के कमज़ोर लोगों के दिलों में शुबहात पैदा करें। यह सिलसिला चलता रहा, यहाँ तक कि बिदअत ज़ाहिर हो गई और बिदअती एक बाक़ायदा जमाअत बन गए। फिर सुल्लतान भी इन मसाइल में उलझ गया, यहाँ तक कि मामला इस हद तक पहुँच गया कि हाकिम ने यह एलान कर दिया कि कुरआन</p> |

| | |
|---|---|
| <p>Aḥmad ibn Ḥanbal was beaten to force him to accept it.’</p> | <p>मखलूक है, और लोगों को इस अक्रीदे को इख्तियार करने पर मजबूर किया गया, और इमाम अहमद बिन हंबल रहमतुल्लाह अलैह को भी इस बात को मनवाने के लिए मारा-पीटा गया।”</p> |
| <p>‘Then men from the people of the Sunnah, such as Shaykh Abu-l-Ḥasan al-Ash‘arī, Ibn Kullāb, Ibn Mujāhid, al-Muḥāsibī and their likes, were entrusted with the task restoring the Sunnah and entered into in depth discussions with the innovators using their own technical language. They fought and slew them with their own weapons. Muslims of this community went forward, holding to the Book and the Sunnah, and turned away from the doubts of the heretics, not looking into non-essential and substance. Such were the Salaf.’</p> | <p>“फिर अहल-ए-सुन्नत में से ऐसे लोग उठे, जैसे शैख अबू अल-हसन अशअरी, इब्र कुल्लाब, इब्र मुजाहिद, मुहासिबी और इन जैसे दीगर हज़रात, जिन्हें सुन्नत की बहाली और उसके दिफ़ा का काम सौंपा गया। उन्होंने बिदअतियों के साथ उन्हीं की फ़त्री और इस्तिलाही ज़बान में गहरे मुबाहिस किए, और उन्हीं के हथियारों से उनका मुक़ाबला किया और उन्हें मग़लूब कर दिया। इस उम्मत के मुसलमान किताब व सुन्नत को मज़बूती से थामे आगे बढ़े, और अहल-ए-बिदअत के शुबहात से किनारा-कश रहे। वह न अरज़ में पड़ते थे और न जौहर में। यही सलफ़ का तरीक़ा था।”</p> |
| <p>Now if someone examines the technical terms of the mutakallimūn to the point where he uses that to defend</p> | <p>अब अगर कोई शख्स मुतकल्लिमीन की इस्तिलाहात का इस हद तक मुताला करे कि वह उनके ज़रिए दीन</p> |

the dīn, his position is close to that of the Prophets, but as for those among the extreme mutakallimūn who scorn the method of taking traditions from the believers, encourage studying the books of kalām, and only know the truth through those technical terms, they are censured for not following the path of earlier imams. Allah knows best. As for disputation and arguing with evidence and proof, that is clear in the Qur'an.

का दिफ़ा करे, तो उसका मक़ाम अंबिया के तरीक़े के करीब है। लेकिन वह लोग जो इतिहा-पसंद मुतकल्लिमीन में से हैं, जो अहल-ए-ईमान से रिवायात लेने के तरीक़े को हक़ीर समझते हैं, इल्म-ए-कलाम की किताबों के मुताले की तरगीब देते हैं, और हक़ को सिर्फ़ उन्हीं इस्तिलाहात के ज़रिए जानते हैं, तो वह इस लिए क़ाबिल-ए-मज़म्मत हैं कि उन्होंने पहले आइम्मा के तरीक़े की पैरवी नहीं की। वल्लाहु अअलम। रहा मुनाज़रा और दलाइल व बराहीन के साथ बहस व इस्तिदलाल, तो वह कुरआन में बिलकुल वाज़ेह तौर पर मौजूद है।

The likeness of those who disbelieve is that of someone who yells out to something which cannot hear; it is nothing but a cry and a call. Deaf – dumb – blind. They do not use their intellect. [2:171]

काफ़िरों की मिसाल उस शख्स की सी है जो ऐसी चीज़ को पुकारे जो सुन नहीं सकती; वह तो बस एक चीख़ और पुकार ही है। बहरे हैं, गूंगे हैं, अंधे हैं, पस वह अक़ल से काम नहीं लेते। [2:171]

One understanding of this āyah is that Allah is making a metaphorical allusion to Muḥammad ﷺ who is the warner of the unbelievers and the one who calls them to faith.

इस आयत की एक तफ़सीर यह है कि अल्लाह तआला यहाँ मुहम्मद ﷺ की तरफ़ बतौर इस्तिआरा इशारा फ़रमा रहे हैं, जो काफ़िरों को डराने वाले और उन्हें ईमान की तरफ़

He is saying that he is like a shepherd who calls out to his sheep and camels, but they only hear his call but do not understand what he says. Ibn ‘Abbās, ‘Ikrimah, as-Suddī, az-Zajjāj, al-Farrā’ and Sībawayh explained it like that, saying that the unbeliever is not the one who calls out but the one called out to. Ibn Zayd said, ‘Those who disbelieve are likened in their calling on their inanimate gods, which do not understand, to someone who calls out in the middle of the night and an echo is the only answer they receive. So he shouts to what does not hear or answer and possesses no reality or benefit.’

बुलाने वाले हैं। मतलब यह है कि आप ﷺ उस चरवाहे की मानिंद हैं जो अपनी बकरियों और ऊँटों को आवाज़ देता है, मगर वह सिर्फ़ उसकी आवाज़ तो सुनते हैं, लेकिन यह नहीं समझते कि वह क्या कह रहा है। इब्र अब्बास (रज़ि.), इकरिमा, अस-सुद्दी, अज़-ज़ज्जाज, अल-फर्रा और सीबवेह ने इसी तरह इस आयत की तफ़सीर की है, और कहा है कि यहाँ पुकारने वाला काफ़िर नहीं बल्कि जिसे पुकारा जा रहा है वह काफ़िर है। इब्र ज़ैद ने कहा: “काफ़िरों को उनके इन बे-जान माबूदों को पुकारने में, जो न समझते हैं, उस शख्स से तशबीह दी गई है जो रात के अँधेरे में आवाज़ देता है और उसे जवाब में सिर्फ़ बाज़ग़शत (echo) ही सुनाई देती है। पस वह ऐसी चीज़ को पुकारता है जो न सुनती है, न जवाब देती है, और न उसकी कोई हक़ीक़त है और न कोई नफ़ा।”

Qutrub, however, said, ‘The metaphor refers to the unbelievers calling out to something which cannot possibly respond, meaning their idols, likening them to a

लेकिन कुतरुब ने कहा: “यह मिसाल उन काफ़िरों के बारे में है जो ऐसी चीज़ को पुकारते हैं जो किसी तरह भी जवाब नहीं दे सकती, यानी उनके बुत। उनकी मिसाल उस चरवाहे की

shepherd who calls out to his sheep when he has no idea where they are.' At-Ṭabarī says it means that the unbelievers, in calling on their idols, are like people who call out to something which is distant and cannot hear. In these latter interpretations those calling out are the unbelievers and the idols are what they are calling out to. *Na'īq* is yelling at sheep to keep them back. One uses the term "*nadā'*" for what is far and "*du'ā'*" for what is near. That is why the term "*nadā'*" is used for the *adhān* because it calls to those who are far away.

सी है जो अपनी भेड़ों को आवाज़ देता है, हालाँकि उसे खुद मालूम नहीं होता कि वह कहाँ हैं।" इमाम तबरी फ़रमाते हैं कि इसका मतलब यह है कि काफ़िर अपने बुतों को पुकारने में ऐसे हैं जैसे कोई शख्स किसी दूर चीज़ को पुकारे जो उसकी आवाज़ सुन ही न सकती हो। इन दोनों आख़िरी तफ़्सीरों के मुताबिक़ पुकारने वाले खुद काफ़िर हैं और जिन्हें पुकारा जा रहा है वह उनके बुत हैं। नईक़ उस आवाज़ को कहते हैं जो भेड़ों को पीछे हटाने या रोकने के लिए लगाई जाती है। अरबी में "निदा" का लफ़ज़ दूर वाले के लिए इस्तेमाल होता है, और "दुआ" का लफ़ज़ करीब वाले के लिए। इसी लिए अज़ान के लिए "निदा" का लफ़ज़ इस्तेमाल किया जाता है, क्योंकि वह दूर वालों को भी पुकारती है।

You who believe! eat of the good things We have provided for you and give thanks to Allah if you worship Him alone. [2:172]

ऐ ईमान वालो! उन पाकीज़ा चीज़ों में से खाओ जो हमने तुम्हें अता की हैं, और अल्लाह का शुक्र अदा करो अगर तुम सिर्फ़ उसी की इबादत करते हो। [2:172]

This confirms the first command (2:168) which was to mankind in general. The

यह हुक्म पहली हिदायत (2:168) की ताकीद है, जो तमाम इंसानों के लिए आम तौर पर दी गई थी। यहाँ अहल-

believers are singled out here out of preference and what is meant by 'eating' is consuming things and using them in any way. It is also said that it is eating in the usual sense of the word. In *Ṣaḥīḥ Muslim*, the Messenger of Allah ﷺ said, 'People! Allah is good and only accepts the good. Allah gives the same command to the believers that He gives the Messengers. Allah Almighty says: "*O Messengers, eat of the good things and act rightly. I most certainly know what you do*" (23:51) and He says: "*O you who believe! eat of the good things We have provided for you ... (this āyah)*" Then he mentioned a man who goes on a long journey, is dishevelled and dusty and stretches out his hands to heaven saying, 'O Lord! O Lord!' and said, 'When his food is unlawful, his drink is unlawful, his clothes are unlawful, and his whole maintenance is unlawful. How could such a man be responded

ए-ईमान को खास तौर पर खिताब किया गया है, जो उनकी फ़ज़ीलत और शरफ़ की बिना पर है। यहाँ "खाने" से मुराद सिर्फ़ खाना नहीं, बल्कि इन चीज़ों को इस्तेमाल करना और उनसे नफ़ा उठाना भी है। और यह भी कहा गया है कि इससे मुराद लफ़ज़ के मारूफ़ मानी में खाना ही है। सहीह मुस्लिम में रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: "लोगो! अल्लाह पाक है और वह सिर्फ़ पाक चीज़ ही क़बूल करता है। और अल्लाह ने मोमिनों को वही हुक्म दिया है जो उसने रसूलों को दिया था। अल्लाह तआला फ़रमाता है: 'ऐ रसूलो! पाकीज़ा चीज़ों में से खाओ और नेक अमल करो। बेशक मैं ख़ूब जानता हूँ जो तुम करते हो' (23:51), और वह फ़रमाता है: 'ऐ ईमान वालो! उन पाकीज़ा चीज़ों में से खाओ जो हमने तुम्हें अता की हैं...' (यही आयत)" फिर आप ﷺ ने एक ऐसे शख्स का ज़िक्र फ़रमाया जो लंबा सफ़र करता है, परागंदा हाल और गर्द आलूद है, और अपने हाथ आसमान की तरफ़ उठा कर कहता है: "ऐ मेरे रब! ऐ मेरे रब!" लेकिन उसका खाना हराम है, उसका पीना हराम है, उसका लिबास हराम है, और उसकी परवरिश व ग़िज़ा हराम

| | |
|--|---|
| <p>to?’</p> | <p>से हुई है। फिर फ़रमाया: “तो ऐसे शख्स की दुआ कैसे क़बूल की जा सकती है?”</p> |
| <p>He has only forbidden you carrion, blood and pork and what has been consecrated to other than Allah. But anyone who is forced to eat it – without desiring it or going to excess in it – commits no crime. Allah is Ever-Forgiving, Most Merciful. [2:173]</p> | <p>उसने तुम पर सिर्फ़ मुरदार, खून, सूर का गोश्त, और वह चीज़ हराम की है जिस पर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो। लेकिन जो शख्स मजबूर हो जाए, न तो उसकी ख़्वाहिश रखता हो और न हद से बढ़ने वाला हो, तो उस पर कोई गुनाह नहीं। बेशक अल्लाह बहुत बख़्शने वाला, निहायत रहम फ़रमाने वाला है। [2:173]</p> |
| <p>He has only forbidden you</p> | <p>उसने तुम पर सिर्फ़ हराम किया है।</p> |
| <p>The Arabic expression used here implies limitation and restriction, and so Allah moves from the general permission of the previous āyah to what is forbidden in this one. There is no food forbidden beyond this. This is a Madinan āyah and it is reinforced by another āyah revealed at ‘Arafah: <i>I do not find in what has been revealed to me, any food it is unlawful to</i></p> | <p>यहाँ जो अरबी उस्तूलूब इस्तेमाल हुआ है वह हस्र और तहदीद पर दलालत करता है, यानी अल्लाह तआला पिछली आयत में दी गई आम इजाज़त से इस आयत में ममनूअ चीज़ों की तरफ़ मुन्तक़िल होते हैं। इसके अलावा कोई खाने की चीज़ हराम नहीं। यह एक मदनी आयत है और इसे एक दूसरी आयत से मज़ीद तक़वियत हासिल होती है जो अरफ़ात में नाज़िल हुई: “मैं इस वही</p> |

eat except for...’ (6:145) So it is completely clear.

में जो मेरी तरफ़ की गई है, किसी खाने को हराम नहीं पाता सिवाए उसके...” (6:145)। पस यह बात बिलकुल वाज़ेह हो जाती है।

‘Carrion’ applies to animals, which would normally be slaughtered but which have died without being slaughtered, and to animals which may not be eaten even if they have been slaughtered, such as beasts of prey. This will be examined in more detail when we reach the relevant passage in *Sūrat al-An‘ām*.

“मुर्दार” का इतलाक़ उन जानवरों पर होता है जो आम तौर पर जबह किए जाने के बाद खाए जाते हैं, लेकिन वह जबह किए बग़ैर मर गए हों। इसी तरह इसमें वह जानवर भी शामिल हैं जिन्हें जबह कर दिया जाए तब भी उनका खाना जायज़ नहीं, जैसे दरिंदे और शिकारी जानवर। इस पर मज़ीद तफ़सील सूरह अल-अनआम की मुतअल्लिका आयात के तहत आएगी।

The āyah is general and is qualified by the words of the Prophet ﷺ: *‘Two kinds of carrion are lawful for us: fish and locusts; and the blood of the liver and spleen is also lawful.’* Ad-Dāraqutnī transmitted it. This is an instance of a ḥadīth qualifying a general instruction in the Qur’an. Most of the people of knowledge permit the eating of all the animals of the sea, alive or dead, and this is the school

यह आयत आम है, लेकिन इसे नबी ﷺ के इस फ़रमान ने मख़सूस कर दिया है: “हमारे लिए दो मुर्दार हलाल किए गए हैं: मछली और टिड्डी; और दो खून भी हलाल किए गए हैं: जिगर और तिल्ली।” इस रिवायत को दारकुत्नी ने नक़ल किया है। यह इस बात की मिसाल है कि हदीस कुरआन के आम हुक्म की तख़सीस करती है। अक्सर अहल-ए-इल्म के नज़दीक समुंदर के तमाम जानवर, ख़्वाह ज़िंदा हों या मुर्दा, खाना जायज़ है, और यही इमाम मालिक का

of Mālik. He hesitated about 'sea pigs' (dolphins) and said, 'You said "pig"!' Ibn al-Qāsim said, 'I am cautious about it but do not think that it is unlawful.'

मज़हब है। अलबत्ता उन्होंने "समुंदरी सूर" (डॉल्फ़िन) के बारे में तवक्कुफ़ किया और फ़रमाया: "तुमने 'सूर' कहा!" इब्न अल-कासिम ने कहा: "मैं उसके बारे में एहतियात करता हूँ, लेकिन मैं यह नहीं समझता कि वह हराम है।"

People disagree about the possibility of the Book of Allah being qualified by the Sunnah and they agree that it is not permitted for this to take place if the ḥadīth is weak. Ibn al-'Arabī said that. There is evidence that this verse has been qualified by a number of ḥadīths. In *Ṣaḥīḥ Muslim*, 'Abdullāh ibn Abī Wafā said, 'We went on seven expeditions with the Messenger of Allah ﷺ during which we ate locusts.' It is clear that they ate them even though they had died. This is what most scholars including ash-Shāfi'ī and Abū Ḥanīfah say. The Mālikīs say that they should not be eaten if they have been smothered because they are land creatures.

लोग इस बारे में इख़्तिलाफ़ रखते हैं कि आया किताबुल्लाह के आम हुक्म की तख़्सीस सुन्नत के ज़रिए हो सकती है या नहीं, अलबत्ता इस बात पर सब का इत्तिफ़ाक़ है कि अगर हदीस ज़ईफ़ हो तो उसके ज़रिए यह काम जायज़ नहीं। इब्न अल-अरबी ने यही बात ज़िक्र की है। इस बात पर दलाइल मौजूद हैं कि इस आयत की तख़्सीस मुतअद्दिद अहादीस के ज़रिए हुई है। सहीह मुस्लिम में अब्दुल्लाह बिन अबी औफ़ा (रज़ि.) से रिवायत है: "हम रसूलुल्लाह ﷺ के साथ सात ग़ज़वात में गए, और उनमें हम टिड्डियाँ खाते थे।" यह बात वाज़ेह है कि वह उन्हें मरने के बाद भी खाते थे। यही मौक़िफ़ अक्सर उलमा का है, जिनमें इमाम शाफ़ई और इमाम अबू हनीफ़ा भी शामिल हैं। जबकि मालिकिय्या कहते हैं कि अगर टिड्डियाँ दम घुटने से मर

| | |
|--|---|
| | <p>गई हों तो उन्हें नहीं खाना चाहिए, क्योंकि वह खुशकी के जानवरों में शुमार होती हैं।</p> |
| <p>Scholars disagree about using carrion or anything which is impure for purposes other than eating. There are different positions related from Mālik regarding that as well. Once he said that their use was permitted because it is recorded that the Prophet ﷺ passed by a dead sheep and asked, ‘Why didn’t you take its skin?’ Another time he said, ‘It is all forbidden and it is not permitted to use any of it nor any other impurity in any way,’ so that he did not permit watering crops or animals with impure water or feeding animals things which are impure or even giving them to dogs and other animals. The reason for that is the words of Allah: ‘<i>Unlawful for you are carrion and blood.</i>’ (5:3). And the Prophet ﷺ said in another ḥadīth, ‘<i>Do not use any part of carrion.</i>’ According to the</p> | <p>उलमा के दरमियान इस बात में इख्तिलाफ़ है कि मुर्दार या किसी नजस चीज़ को खाने के अलावा दूसरे इस्तेमालात में लाया जा सकता है या नहीं। इमाम मालिक से भी इस बारे में मुख्तलिफ़ अक़वाल मनकूल हैं। एक मर्तबा उन्होंने कहा कि उसका इस्तेमाल जायज़ है, क्योंकि रिवायत में आता है कि नबी ﷺ एक मुर्दा बकरी के पास से गुज़रे और फ़रमाया: “तुमने उसकी खाल क्यों न ले ली?” और एक दूसरे मौक़े पर इमाम मालिक ने कहा: “यह सब हराम है, और इसमें से किसी चीज़ को, या किसी और नजासत को, किसी भी सूरत में इस्तेमाल करना जायज़ नहीं।” यहाँ तक कि उन्होंने नापाक पानी से खेतों को सीराब करने, जानवरों को पिलाने, या जानवरों को नापाक चीज़ें खिलाने, बल्कि कुत्तों और दूसरे जानवरों को भी देने की इजाज़त नहीं दी। इसकी दलील अल्लाह तआला का यह फ़रमान है: “तुम पर मुर्दार और खून हराम कर दिए गए हैं” (5:3)।</p> |

ḥadīth of ‘Abdullāh ibn ‘Ukaym, *‘Do not use any part of carrion whether the hide or the sinews.’*

और नबी ﷺ ने एक और हदीस में फ़रमाया: “मुर्दार के किसी हिस्से से फ़ायदा न उठाओ।” इसी तरह अब्दुल्लाह बिन उक़ैम (रज़ि.) की हदीस में है: “मुर्दार की किसी चीज़ से फ़ायदा न उठाओ, न उसकी खाल से और न उसके पट्टों / रगों से।”

When a camel, cow or sheep is slaughtered, and there is a foetus inside it, it is permitted to eat the foetus without slaughtering it unless it emerges alive in which case it should be slaughtered. If the foetus emerges dead after the mother has been slaughtered it is considered as one of its limbs. That is clear because it is not permitted to sell an animal excluding her unborn foetus and the foetus follows the mother just as the limbs do. Jābir related that the Prophet ﷺ was asked about a cow, sheep or camel that is slaughtered with a dead foetus inside it. He said, *‘Eat it if you wish. Its slaughtering was the slaughtering of its mother.’* Abū Dāwūd transmitted the

जब ऊँट, गाय या बकरी को ज़बह किया जाए और उसके पेट में बच्चा (जनीन) मौजूद हो, तो उस बच्चे को अलग ज़बह किए बग़ैर खाना जायज़ है, सिवाए उस सूत के कि वह ज़िंदा निकले; ऐसी सूत में उसे अलग ज़बह करना ज़रूरी होगा। और अगर माँ के ज़बह होने के बाद बच्चा मुर्दा हालत में निकले, तो वह उसी के आज़ा में शुमार होगा। यह बात इस लिए वाज़ेह है कि किसी जानवर को उसके पेट के बच्चे को मुस्तसना करके बेचना जायज़ नहीं, क्योंकि जनीन अपनी माँ के ताबे होता है, बिलकुल उसी तरह जैसे आज़ा ताबे होते हैं। जाबिर (रज़ि.) रिवायत करते हैं कि नबी ﷺ से उस गाय, बकरी या ऊँट के बारे में पूछा गया जिसे ज़बह किया जाए और उसके अंदर मुर्दा बच्चा हो। आप ﷺ ने फ़रमाया: “अगर तुम चाहो तो उसे खा लो, क्योंकि उसकी ज़बह,

| | |
|---|--|
| <p>same idea from Abū Sa‘īd al-Khudrī. It is a definite text.</p> | <p>उसकी माँ की ज़बह ही है।” अबू दाऊद ने इसी मफ़हूम की रिवायत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ि.) से भी नक़ल की है। यह एक सरीह और क़तई नस है।</p> |
| <p>The transmissions from Mālik vary about whether the skin of carrion is made pure by tanning or not. It is related that it is not, and that is the well-known position of his school, and it is also related that it is pure, based on the words of the Prophet ﷺ, ‘Any skin which is tanned is pure.’ It is possible that it means that tanning removes external impurities and so it can be used for dry things and for sitting on or for holding water, because water is pure as long as it is not changed in either taste or smell.</p> | <p>इमाम मालिक से इस बारे में मुख़्तलिफ़ रिवायात मनकूल हैं कि आया मुर्दार की खाल दिबागत के बाद पाक हो जाती है या नहीं। एक रिवायत यह है कि वह पाक नहीं होती, और यही उनके मज़हब का मशहूर क़ौल है। और एक दूसरी रिवायत यह है कि वह पाक हो जाती है, नबी ﷺ के इस फ़रमान की बुनियाद पर: “जो भी खाल दिबागत दी जाए, वह पाक हो जाती है।” और यह भी मुमकिन है कि इस हदीस का मतलब यह हो कि दिबागत खाल की ज़ाहिरी नजासत को दूर कर देती है, लिहाज़ा उसे ख़ुश्क चीज़ों के लिए, बिछाने / बैठने के लिए, या पानी रखने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है, क्योंकि पानी उस वक़्त तक पाक रहता है जब तक उसका ज़ायका या बू तब्दील न हो।</p> |
| <p>The hair and wool of carrion is pure since it is related from Umm Salamah that the Prophet</p> | <p>मुर्दार के बाल और ऊन पाक हैं, क्योंकि उम्मे सलमा (रज़ि.) से रिवायत है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया:</p> |

ﷺ said, 'There is no harm in keeping carrion when it is tanned and its wool and hair are washed.' That is because it is pure if it is taken from it while alive, and so the same applies after death, when the flesh is impure, alive or dead. If the flesh is impure when alive, then it is like that after death. So the wool differs in the state of life and death. This is not obliged for milk and the eggs of dead chickens because we believe milk and eggs to be pure after death. They are, however, in an impure vessel and become impure from the proximity of the vessel, not by death.

"मुर्दार को रखने में कोई हरज नहीं जब उसकी खाल दिबागत दे दी जाए और उसकी ऊन और बाल धो लिए जाएँ।" इसकी वजह यह है कि जब यह चीज़ें ज़िंदा हालत में ली जाएँ तो पाक होती हैं, लिहाज़ा मरने के बाद भी यही हुक्म बाक़ी रहता है, जबकि गोश्त नजस होता है, ख़्वाह जानवर ज़िंदा हो या मुर्दा। अगर गोश्त ज़िंदा हालत में नजस हो तो मरने के बाद भी वह वैसा ही रहता है। इस तरह ऊन का हुक्म ज़िंदगी और मौत दोनों हालतों में मुख़लिफ़ होता है। अलबत्ता यह हुक्म दूध और मुर्दा मुर्गी के अंडों पर लाज़िम नहीं आता, क्योंकि हम दूध और अंडों को मौत के बाद भी पाक समझते हैं। ताहम यह चीज़ें नजस बर्तन (यानी जिस्म) में होती हैं, और उनकी नजासत बर्तन के करीब होने की वजह से होती है, न कि ख़ुद मौत की वजह से।

There are two positions when a mouse falls into something. One position is when the mouse is removed while still alive: then the thing it fell into is pure. If it dies after falling in, there are two possibilities. If it is a liquid, then all of it is

जब चूहा किसी चीज़ में गिर जाए तो उसके बारे में दो हालतें हैं। अगर चूहा ज़िंदा हालत में निकाल लिया जाए तो जिस चीज़ में वह गिरा था वह पाक रहेगी। लेकिन अगर वह गिरने के बाद मर जाए तो फिर दो सूरतें हैं: अगर वह चीज़ माए / बहने वाली हो

impure. If it is solid, then what it is touching is impure. It and what is around it is discarded and the rest can be used since it is pure based on what is related from the Prophet ﷺ when he was asked about a mouse that had fallen into ghee and died. He ﷺ said, *'If it is solid, throw away it and what is around it. If it is liquid, then pour it out.'* Scholars disagree about washing such a substance. Some say that it is not purified by washing because it is liquid impurity and so it is like blood, wine, urine and all impurities. Ibn al-Qāsim said that it is purified by washing because it is a substance made impure by proximity to impurity, as is the case with a garment. This is not the case with blood which is impure in itself nor with wine or urine because washing destroys them.

तो सारी की सारी नजस हो जाएगी, और अगर वह चीज़ जामिद / ठोस हो तो सिर्फ़ वह हिस्सा नजस होगा जिसे चूहा छू रहा था। लिहाज़ा चूहा और उसके आस-पास का हिस्सा फेंक दिया जाएगा, और बाक़ी हिस्सा इस्तेमाल किया जा सकता है, क्योंकि वह पाक है। इसकी बुनियाद नबी ﷺ से मरवी इस हदीस पर है कि आप ﷺ से घी के बारे में पूछा गया जिसमें चूहा गिर कर मर गया था। आप ﷺ ने फ़रमाया: "अगर वह जमे हुए (ठोस) घी में हो तो चूहे को और उसके इर्द-गिर्द के हिस्से को फेंक दो, और अगर वह माए हो तो उसे बहा दो।" इसके बाद उलमा ने इस बात में इख़्तिलाफ़ किया है कि ऐसी चीज़ को धो कर पाक किया जा सकता है या नहीं। बाज़ ने कहा कि धोने से वह पाक नहीं होगी, क्योंकि वह माए नजासत है, लिहाज़ा वह ख़ून, शराब, पेशाब और दीगर नजासतों की तरह है। जबकि इब्न अल-क़ासिम ने कहा कि वह धोने से पाक हो जाएगी, क्योंकि वह अपनी ज़ात में नजस नहीं, बल्कि नजासत के कुर्ब की वजह से नापाक हुई है, जैसे कपड़ा नापाक हो जाता है। यह मामला ख़ून जैसा नहीं, क्योंकि ख़ून अपनी ज़ात में नजस है,

~~~~~

|                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                      |                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     |
|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
|                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                      | <p>और न ही शराब और पेशाब की तरह है, क्योंकि धोने से वह चीज़ें बाक़ी ही नहीं रहतीं।</p>                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                              |
| <p>Our ruling that it becomes pure by washing refers to its original state of purity and other aspects of use, but it should not be sold without that being made clear because it is a defect in the eye of people which they dislike. Some believe that it is unlawful and impure and so it is not permitted to sell it until the defect has been made clear as is the case with other defective items. It is not permitted to sell it at all before it has been washed because it is not permitted to sell impure things, and because it is then an impure liquid like wine, and because the Prophet ﷺ was asked about the price for wine and said, <i>'Allah cursed the Jews. Fat was made unlawful for them and so they collected it and sold it and consulted its price.'</i> When Allah makes something unlawful, He makes its price unlawful. This liquid</p> | <p>हमारा यह क़ौल कि धोने से वह पाक हो जाती है, उसके असल हुक्म-ए-तहारत और दीगर इस्तेमालात के एतिबार से है। लेकिन उसे बेचना जायज़ नहीं जब तक इस ऐब को वाज़ेह न कर दिया जाए, क्योंकि लोगों की नज़र में यह एक ऐब है जिसे वह नापसंद करते हैं। बाज़ अहल-ए-इल्म का ख़याल है कि यह हराम और नजस है, लिहाज़ा इस ऐब को ज़ाहिर किए बग़ैर इसकी बैअ जायज़ नहीं, जैसे दूसरे मयूब सामान के मामले में होता है। और उसे धोने से पहले बिलकुल बेचना जायज़ नहीं, क्योंकि नजस चीज़ों की बैअ जायज़ नहीं। नीज़ उस वक़्त वह एक नापाक माए की मानिंद है, जैसे शराब। और इस लिए भी कि नबी ﷺ से शराब की क़ीमत के बारे में पूछा गया तो आप ﷺ ने फ़रमाया: "अल्लाह ने यहूदियों पर लानत फ़रमाई। उन पर चर्बी हराम की गई तो उन्होंने उसे जमा किया, फिर बेचा, और उसकी क़ीमत खाई।" जब अल्लाह किसी चीज़ को हराम करता है तो उसकी क़ीमत को</p> |

~~~~~

| | |
|--|---|
| <p>is unlawful because it is impure and so its price follows the same ruling.</p> | <p>भी हुराम कर देता है। पस यह माए चूँकि नजस और हुराम है, इस लिए उसकी क्रीमत भी उसी हुक्म के ताबे होगी।</p> |
| <p>There is disagreement about when something falls into a pot, flying or not, and then dies. Ibn Wahb related that Mālik said that what is in the pot may not be eaten and is impure since it is mixed with what has died in it. It is related from Ibn al-Qāsim that any meat should be washed and the broth poured out. Ibn ‘Abbās was asked about this and said that the meat is washed and eaten. There is no disagreement among his people about the broth. Ibn Khuwayzimandād mentioned it.</p> | <p>इस बारे में इख्तिलाफ़ है कि जब कोई चीज़ हांडी / बर्तन में गिर जाए, ख़्वाह वह उड़ने वाली हो या न हो, और फिर उसी में मर जाए, तो उसका क्या हुक्म है। इब्र वहब ने रिवायत किया है कि इमाम मालिक ने फ़रमाया: “जो कुछ हांडी में है वह न खाया जाएगा और वह नजस होगा, क्योंकि वह उस चीज़ के साथ मिल चुका है जो उसी में मर गई है।” और इब्र अल-क़ासिम से यह रिवायत मनकूल है कि गोशत को धो लिया जाए और शोरबा बहा दिया जाए। इब्र अब्बास (रज़ि.) से भी इस बारे में पूछा गया तो उन्होंने फ़रमाया कि गोशत धो कर खा लिया जाए। और शोरबे के बारे में उनके अहल-ए-इल्म के दरमियान कोई इख्तिलाफ़ नहीं। यह बात इब्र ख़ुवैज़िमंदाद ने ज़िक्र की है-</p> |
| <p>As for the rennet from carrion and milk from carrion, ash-Shāfi‘ī says that it is impure because Allah’s words are general: <i>‘Unlawful for you are</i></p> | <p>रहा मुर्दार का पनीर का माया (रेनट) और मुर्दार का दूध, तो इमाम शाफ़ई के नज़दीक यह नजस हैं, क्योंकि अल्लाह तआला का फ़रमान आम है: “तुम पर मुर्दार हुराम कर दिया गया</p> |

carrion... (5:3) Abū Hanīfah said that they are pure, saying that the impurity of a source has no effect on what is around it. He said, 'That is why meat is eaten along with its veins in spite of the proximity of blood without requiring purification or washing.' Mālik's view is similar to that of Abū Hanīfah: it does not become impure by the fact of its death but by the proximity of the impure vessel. It is something which cannot be washed. The same is true of eggs which emerge from a chicken after death because the egg is soft like a liquid before it comes out and becomes hard by exposure to the air.

है..." (5:3)। जबकि इमाम अबू हनीफ़ा ने कहा कि यह पाक हैं, और उनका कहना है कि नजस अस्ल का असर उसके इर्द-गिर्द मौजूद चीज़ों पर नहीं पड़ता। उन्होंने मिसाल देते हुए कहा: "इसी लिए गोश्त उसकी रगों के साथ खाया जाता है, हालाँकि वह खून के करीब होता है, फिर भी उसे पाक करने या धोने की ज़रूरत नहीं होती।" इमाम मालिक का मौक़िफ़ भी इमाम अबू हनीफ़ा के करीब है: यह चीज़ें मौत की वजह से नजस नहीं होतीं, बल्कि नजस बर्तन (यानी जिस्म) के कुर्ब की वजह से नापाक होती हैं। और यह ऐसी चीज़ है जिसे धो कर पाक नहीं किया जा सकता। इसी तरह अंडे का भी यही हुक्म है जो मुर्गी के मरने के बाद निकलते हैं, क्योंकि अंडा निकलने से पहले नरम और माए जैसा होता है, फिर हवा के लगने से सख्त हो जाता है।

Ibn Khuwayzimandād said: 'If it is said that your view leads to what is contrary to consensus, that is because the Prophet ﷺ and the Muslims after him used to eat cheese which was brought to them from foreign

इब्र ख़ुवैज़िमंद़ाद ने कहा: "अगर यह कहा जाए कि तुम्हारा मौक़िफ़ इज्मा के खिलाफ़ नतीजा देता है, तो उसकी वजह यह है कि नबी ﷺ और आप के बाद मुसलमान वह पनीर खाते थे जो उनके पास बैरूनी इलाक़ों से लाया

lands, and it was known that animals slaughtered by the Magians are carrion, and they did not consider whether it was from carrion or correctly slaughtered animals. Very little of the rennet is used in milk made into cheese and a small amount of impurity is ignored when it is mixed with a lot liquid. This is one answer. The other answer is that that occurred at the beginning of Islam and none of the Companions was able to change the eating of cheese from Persia. Cheese is not part of the food of the Arabs. When the Muslims spread in the territory of the non-Arabs by conquest, they did their own slaughtering. This is why the Prophet ﷺ and the Companions ate cheese brought from the land of the non-Arabs and made from the rennet of their slaughtered animals.'

Abū 'Umar said, 'There is nothing wrong in eating the food of idolaters, Magians and

जाता था, हालाँकि यह मालूम था कि मजूसियों के ज़बह किए हुए जानवर मुर्दार के हुक्म में होते हैं, और उन्होंने यह तहक़ीक़ नहीं की कि वह पनीर मुर्दार से बना है या दुरुस्त तौर पर ज़बह किए गए जानवरों से। और पनीर बनाने के लिए दूध में माया (रेनट) बहुत कम मिक्कदार में डाला जाता है, और जब थोड़ी सी नजासत ज़्यादा माए में मिल जाए तो उसे नज़रअंदाज़ किया जाता है। यह एक जवाब है। दूसरा जवाब यह है कि यह मामला इस्लाम के इब्तिदाई दौर में पेश आया, और सहाबा में से कोई इस बात की कुदरत नहीं रखता था कि फ़ारस के पनीर के इस्तेमाल को बदल दे, क्योंकि पनीर अरबों की ग़िज़ा का हिस्सा नहीं था। जब मुसलमान ग़ैर-अरब इलाक़ों में फ़ुतूहात के ज़रिए फैले, तो उन्होंने खुद ज़बह करना शुरू किया। इसी लिए नबी ﷺ और सहाबा ने ग़ैर-अरब इलाक़ों से लाया गया पनीर खाया, जो उनके ज़बह किए गए जानवरों के माया से तैयार किया जाता था।"

अबू उमर ने कहा: "मुशरिकीन, मजूसियों और दीगर उन काफ़िरों का खाना खाने में कोई हरज नहीं जो

other unbelievers who have no Scripture as long as it is not from their slaughtered animals, except in the case of cheese that may contain the rennet of carrion. We find in the *Sunan* of Ibn Mājah about cheese and ghee from Ismā‘īl ibn Mūsā as-Suddī from Sayf ibn Hārūn from Sulaymān at-Taymī from Abū ‘Uthmān an-Nahdī that Salmān al-Fārisī said, ‘The Messenger of Allah ﷺ was asked about ghee, cheese and wild donkeys. He answered, “The lawful is what Allah has made lawful in His Book. The unlawful is what Allah has made unlawful in His Book. What He remained silent about is excused.”’”

अहल-ए-किताब नहीं हैं, बशर्ते कि वह उनके ज़बह किए हुए जानवरों में से न हो, सिवाए पनीर के, क्योंकि उसमें मुर्दार का माया (रेनट) शामिल हो सकता है।” और सुनन इब्न माजह में पनीर और घी के बारे में इस्माईल बिन मूसा अस-सुद्दी, सैफ़ बिन हारून, सुलैमान अत-तैमी, अबू उस्मान अन-नहदी के वास्ते से सलमान फ़ारसी (रज़ि.) से रिवायत है कि उन्होंने कहा: “रसूलुल्लाह ﷺ से घी, पनीर और जंगली गधों के बारे में पूछा गया, तो आप ﷺ ने फ़रमाया: ‘हलाल वह है जिसे अल्लाह ने अपनी किताब में हलाल किया है, और हराम वह है जिसे अल्लाह ने अपनी किताब में हराम किया है, और जिस चीज़ के बारे में वह ख़ामोश रहा है, वह माफ़ है।”

blood

Scholars agree that blood is unlawful and impure and may not be eaten or used. Ibn Khuwayzimandād said, ‘Blood is unlawful except what is unavoidable and what is unavoidable is excused. That which is unavoidable is the

खून

उलमा का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि खून हराम और नजस है, और न उसे खाना जायज़ है और न इस्तेमाल करना। इब्न ख़ुवैज़िमंद़ाद ने कहा: “खून हराम है, सिवाए उसके जो नाज़गीर हो, और जो नाज़गीर हो वह माफ़ है।” और जो चीज़ नाज़गीर

blood in meat and veins, and a small amount on the body and clothing in which one prays.’ We have said that because the Almighty says: “*Unlawful for you are carrion, blood...*” (5:3) and elsewhere: “*Say: ‘I do not find in what has revealed to me, any food it is unlawful to eat except for carrion, flowing blood...’*” (6:145) What is forbidden is blood that is spilled. ‘Ā’ishah said, ‘We used to cook a dish in the time of the Messenger of Allah ﷺ and it had a yellow colour from the blood but we ate it without dislike.’ Otherwise that would entail undue hardship. This is a basic principle in the Law: whenever the community is harmed and overly burdened by performing an act of worship, that is cancelled for them. Do you not see that someone may eat carrion when forced to out of necessity, a sick person may break the fast and do tayammum, and the like?

शुमार होती है, वह गोश्त और रगों में बाक़ी रह जाने वाला ख़ून है, नीज़ बदन और कपड़ों पर थोड़ी मिक्कदार में लग जाने वाला ख़ून जिस के साथ नमाज़ पढ़ी जाए। हमने यह बात इस लिए कही है क्योंकि अल्लाह तआला फ़रमाता है: “तुम पर मुर्दार और ख़ून हराम कर दिए गए हैं...” (5:3), और एक और जगह फ़रमाया: “कह दो: मैं इस वही में जो मेरी तरफ़ की गई है, किसी खाने को हराम नहीं पाता, सिवाए मुर्दार और बहते हुए ख़ून के...” (6:145)। पस जो ख़ून हराम है वह बहाया हुआ / बहने वाला ख़ून है। आइशा (रज़ि.) ने फ़रमाया: “हम रसूलुल्लाह ﷺ के ज़माने में एक सालन पकाया करते थे जिसमें ख़ून की वजह से ज़र्दी माइल रंग होता था, और हम उसे बग़ैर किसी कराहत के खा लेते थे।” वर्ना इसमें ग़ैर-मामूली मशक्कत लाज़िम आती। और यह शरीअत का एक बुनियादी उसूल है कि जब किसी इबादत या हुक्म की अदायगी में उम्मत पर ज़रर और शदीद बोझ आ जाए तो उसमें तख़्ज़ीफ़ कर दी जाती है। क्या तुम नहीं देखते कि मजबूर शख्स ज़रूरत के वक़्त मुर्दार खा सकता है, बीमार शख्स रोज़ा तोड़ सकता है और

| | |
|---|--|
| | <p>तयम्मूम कर सकता है, और इसी तरह की दूसरी मिसालें भी हैं।</p> |
| <p>In this āyah Allah forbids blood without qualification and then He qualifies it in <i>al-An‘ām</i> (6:145) by the word ‘flowing’ (<i>masfūḥ</i>). Scholars agree that this qualifies what is unqualified, and the blood meant is that which is spilled out and not that which is mixed with the flesh which, by consensus, is not forbidden. That is also the case with the liver and spleen. There is disagreement about fish blood which is separated from it. Al-Qābisī related that it is pure and continues to be pure, and that is also said by Ibn al-‘Arabī. He said, ‘If fish blood had been impure, it would have been prescribed to slaughter them.’ Abū Ḥanīfah takes the same view. I heard one of the Ḥanafīs say that the evidence for its purity is that when it is dried, it is white whereas other blood is black. This is a point that they use in their argument</p> | <p>इस आयत में अल्लाह तआला ने खून को बगैर किसी क़ैद के हाराम फ़रमाया है, फिर सूरह अल-अनआम (6:145) में उसे “बहने वाला” (मस्फूह) कह कर मुक़य्यद कर दिया है। उलमा का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि यह ग़ैर-मुक़य्यद हुक्म की तख़्सीस / तक़यीद है, और इससे मुराद वह खून है जो बहा दिया जाए, न कि वह जो गोश्त में मिला हुआ रहता है, क्योंकि वह इज्माअन हाराम नहीं है। इसी तरह जिगर और तिल्ली का भी यही हुक्म है। अलबत्ता मछली के खून के बारे में, जो उससे अलग हो जाए, इख़्तिलाफ़ है। अल-क़ाबिसी ने नक़ल किया है कि वह पाक है और अपनी तहारत पर बाक़ी रहता है, और यही बात इब्न अल-अरबी ने भी कही है। उन्होंने कहा: “अगर मछली का खून नजस होता तो उसके लिए भी ज़बह मशरूअ किया जाता।” इमाम अबू हनीफ़ा का भी यही मौक़िफ़ है। और मैंने अह्लाफ़ में से एक शख्स को यह कहते हुए सुना कि उसकी तहारत की दलील यह है कि जब मछली का खून खुश्क होता है तो</p> |

against the Shāfi'īs.

सफ़ेद हो जाता है, जबकि दूसरे खून खुशक हो कर सियाह हो जाते हैं। यह एक ऐसा नुक्ता है जिसे वह शाफ़इय्या के खिलाफ़ अपने इस्तिदलाल में पेश करते हैं।

and pork

और सूर का गोश्त।

Allah mentions the meat of pigs to indicate that it is forbidden, whether slaughtered or not. It includes the fat, gristle and all other parts. The Community agree that the fat of pigs is forbidden. Mālik and his people used as evidence that if someone who swears not to eat fat then eats meat, he has not broken his oath, but if he swears not to eat meat and then eats fat, he has broken his oath because fat is included with meat. Allah made fat unlawful to the tribe of Israel (6:146) but that did not make the meat unlawful. This is the basis for the distinction that Mālik made. According to the view of ash-Shāfi'ī, Abū Thawr and the people of opinion, if someone swears not to eat meat and then eats fat, he has not broken his

अल्लाह तआला ने सूर के गोश्त का ज़िक्र इस बात को वाज़ेह करने के लिए किया है कि वह हर हाल में हराम है, ख़्वाह उसे ज़बह किया गया हो या न किया गया हो। और इसमें चर्बी, नरम हड्डी / गज़्रूफ़ (gristle) और उसके दीगर तमाम अजज़ा भी शामिल हैं। उम्मत का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि सूर की चर्बी भी हराम है। इमाम मालिक और उनके अस्थाब ने इस पर यह इस्तिदलाल किया है कि अगर कोई शख्स क़सम खाए कि वह चर्बी नहीं खाएगा, फिर वह गोश्त खा ले, तो उसकी क़सम नहीं टूटेगी। लेकिन अगर वह क़सम खाए कि वह गोश्त नहीं खाएगा, फिर वह चर्बी खा ले, तो उसकी क़सम टूट जाएगी, क्योंकि चर्बी गोश्त के मफ़हूम में दाख़िल है। अल्लाह तआला ने बनी इस्राईल पर चर्बी को हराम किया था (6:146), लेकिन उससे गोश्त हराम नहीं हुआ था।

oath. Ahmad said that if he swears not to eat meat and then eats fat, there is no harm unless he intended to also avoid fats.

यही वह बुनियाद है जिस पर इमाम मालिक ने यह तफ़रीक़ क़ायम की। जबकि इमाम शाफ़ई, अबू सौर और अहल-ए-राय के नज़दीक अगर कोई शख्स क़सम खाए कि वह गोश्त नहीं खाएगा, फिर चर्बी खा ले, तो उसकी क़सम नहीं टूटेगी। इमाम अहमद ने कहा कि अगर वह गोश्त न खाने की क़सम खाए, फिर चर्बी खा ले, तो कोई हरज नहीं, अल्बत्ता यह कि उसकी नियत चर्बी से भी बचने की हो।

There is no disagreement that all of the pig is forbidden except for the bristles which can be used for stitching. It is reported that a man asked the Messenger of Allah ﷺ about stitching with pig bristle and he said, *'There is no harm in it.'* Ibn Khuwayzimandād mentioned it and said, 'That is because stitching was done in the time of the Messenger of Allah ﷺ and clearly existed after him. We do not know that the Messenger of Allah ﷺ or any of the imams after him objected to it. When the Messenger ﷺ allows

इस बात में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि सूर का पूरा जानवर हराम है, सिवाए उसके खुरदरे बालों के, जिन्हें सिलाई / सीवन में इस्तेमाल किया जा सकता है। रिवायत है कि एक शख्स ने रसूलुल्लाह ﷺ से सूर के बालों से सिलाई करने के बारे में पूछा, तो आप ﷺ ने फ़रमाया: "इसमें कोई हरज नहीं।" इब्र ख़ुवैज़िमंदाद ने इस रिवायत को ज़िक्र किया और कहा: "इसकी वजह यह है कि रसूलुल्लाह ﷺ के ज़माने में सिलाई का यह तरीक़ा मौजूद था, और आप ﷺ के बाद भी यह राइज रहा। हमें यह मालूम नहीं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने या आप ﷺ के बाद किसी इमाम ने इस

| | |
|--|---|
| <p>something, it is as if it were prescribed from him.’</p> | <p>पर नकीर फ़रमाई हो। और जब रसूलुल्लाह ﷺ किसी चीज़ को जायज़ करार दे दें, तो गोया वह आप ﷺ की तरफ़ से मशरूअ करार पा गई।”</p> |
| <p>There is no disagreement that pigs on land are unlawful as we mentioned. There is, however, disagreement about ‘sea pigs’ (dolphins). Mālik refused to give any answer about it and said, ‘You said “pigs”!’ It will be dealt with in <i>Sūrat al-Mā'idah</i>.</p> | <p>इस बात में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि खुश्की के सूर हराम हैं, जैसा कि हम ज़िक्र कर चुके हैं। अलबत्ता “समुंदरी सूर” (डॉल्फ़िन) के बारे में इख़्तिलाफ़ है। इमाम मालिक ने इसके बारे में जवाब देने से तवक्कुफ़ किया और फ़रमाया: “तुमने ‘सूर’ कहा!” इस पर सूरह अल-माइदा में गुफ़्तगू आएगी।</p> |
| <p>and what has been consecrated to other than Allah.</p> | <p>और वह चीज़ जिस पर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो।</p> |
| <p>This is something over which other than the Name of Allah was mentioned when it was slaughtered. It refers to the slaughtering done by Magians, idol-worshippers and atheists. The idol worshipper sacrifices to an idol, the Magian to the fire, and the atheist, who does not believe anything, slaughters for himself. There is no disagreement among the scholars that whatever a</p> | <p>इससे मुराद वह जानवर है जिसे ज़बह करते वक़्त अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो। इसमें मजूसियों, बुत-परस्तों और दहरियों / मुल्हिदों का ज़बीहा शामिल है। बुत-परस्त अपने बुत के लिए ज़बह करता है, मजूसी अपनी आग के लिए, और दहरी / मुल्हिद जो किसी चीज़ पर ईमान नहीं रखता, वह अपने ही लिए ज़बह करता है। उलमा के दरमियान इस बात में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि मजूसी या बुत-</p> |

Magian or idol-worshipper slaughters to their idol or fire may not be eaten. According to Mālik, ash-Shāfi'ī and others, what such people sacrifice to the fire or idol may not be eaten at all. Ibn al-Musayyab and Abū Thawr, however, permit that meat be eaten if it is slaughtered for a Muslim at his order. This will explained in more detail in *Sūrat al-Mā'idah*.

परस्त जो कुछ अपने बुत या आग के लिए ज़बह करें, वह खाना जायज़ नहीं। इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई और दीगर उलमा के नज़दीक, जो कुछ यह लोग आग या बुत के नाम पर कुर्बान करें, उसे किसी हाल में खाना जायज़ नहीं। अलबत्ता इब्र अल-मुसय्यब और अबू सौर के नज़दीक अगर ऐसा जानवर किसी मुसलमान के लिए, उसके हुक्म पर ज़बह किया गया हो, तो उसके गोश्त के खाने की इजाज़त है। इस मसले की मज़ीद तफ़सील सूरह अल-माइदा में आएगी।

The word 'consecration' (*uhilla*) means 'to raise the voice'. It is used for the cry of a newborn baby. Ibn 'Abbās said, 'What is meant is what is sacrificed to idols and stones.' The custom of the Arabs was to shout the name of the one intended by the sacrifice. That was their usual practice and so it is considered to be tantamount to the intention of consecration. Do you not see that when Ghālib, the father of al-Farazdaq, slaughtered

लफ़ज़ "उहिल्ल" (इहलाल) का मानी है आवाज़ बुलंद करना। यह लफ़ज़ नवजात बच्चे के रोने / चीखने के लिए भी इस्तेमाल होता है। इब्र अब्बास (रज़ि.) ने फ़रमाया: "इससे मुराद वह चीज़ है जो बुतों और पत्थरों के लिए कुर्बान की जाए।" अरबों का तरीक़ा यह था कि वह कुर्बानी के वक़्त उस हस्ती का नाम बुलंद आवाज़ से पुकारते थे जिसके लिए वह कुर्बानी करते थे। यही उनकी आम आदत थी, और इसी बुनियाद पर उसे इहलाल (तख़सीस) के हुक्म में शुमार किया गया। क्या तुम नहीं देखते कि जब

camels, ‘Alī ibn Abī Tālib observed the intention and said, ‘It is part of what is consecrated to other than Allah’? People left it. Ibn ‘Atīyyah said, ‘In the reports of al-Ḥasan ibn Abī’l-Ḥasan, I saw that he was asked about an opulent woman who prepared a wedding for her amusement and slaughtered a camel. Al-Ḥasan said, “It is not lawful to eat it. It was slaughtered to an idol.”’

ग़ालिब, वालिद-ए-फ़रज़दक़ ने ऊँट ज़बह किए तो अली बिन अबी तालिब (रज़ि.) ने उसकी नियत को पहचान लिया और फ़रमाया: “यह उस चीज़ में शामिल है जो अल्लाह के सिवा किसी और के लिए मख़सूस की गई है।” चुनाँचे लोगों ने उसे छोड़ दिया। इब्न अतिय्या ने कहा: “मैंने हसन बिन अबी अल-हसन (बसरी) की रिवायात में देखा कि उनसे एक मालदार औरत के बारे में पूछा गया जिसने तफ़रीह के लिए शादी की एक महफ़िल तैयार की और एक ऊँट ज़बह किया। हसन ने कहा: ‘इसे खाना जायज़ नहीं, क्योंकि वह एक बुत के लिए ज़बह किया गया है।’

Connected to this is what we related from Yaḥyā ibn Yaḥyā at-Tamīmī, the Shaykh of Muslim, from Jarīr that Qābūs said, ‘A woman sent me to ‘Ā’ishah and said to greet her and ask her which prayer the Messenger of Allah ﷺ liked best to persevere in.’ She answered, “*He used to pray four rak‘ahs before Zuhr in which he stood for a long time and did excellent bowing and*

इससे मुतअल्लिक़ वह रिवायत भी है जो हमने याह्या बिन याह्या अत-तमिमी, जो इमाम मुस्लिम के शैख़ हैं, उनके वास्ते से जरीर से नक़ल की है कि क़ाबूस ने कहा: “एक औरत ने मुझे आइशा (रज़ि.) के पास भेजा और कहा कि उन्हें सलाम कहना और उनसे पूछना कि रसूलुल्लाह ﷺ कौन सी नमाज़ को सबसे ज़्यादा पाबंदी से अदा करना पसंद फ़रमाते थे?” तो आइशा (रज़ि.) ने जवाब दिया: “आप ﷺ जुहर से पहले चार

prostration. As for what he never omitted, whether healthy or ill, resident or traveling, that was the two rak'ahs before the Morning Prayer." At that a woman from the people said, "Mother of the Believers, we have a nurse from the Persians and they give us gifts on their festivals. Can we eat any of it?" She answered, "As for the meat slaughtered in the name of that day, do not eat it, but you can eat of the fruit of their trees."

रकअतें पढ़ते थे, जिनमें आप लंबा क्रियाम फ़रमाते और रुकू व सुजूद भी बहुत ख़ूब अदा करते थे। और जिस चीज़ को आप ﷺ ने कभी तर्क नहीं किया, ख़्वाह आप सेहतमंद हों या बीमार, मुक़ीम हों या सफ़र में, वह फ़ज़्र से पहले की दो रकअतें थीं।" इसी दौरान वहाँ मौजूद एक औरत ने कहा: "ऐ उम्मुल-मोमिनीन! हमारे पास फ़ारस की एक दाया / ख़िदमतगार है, और वह अपने त्योहारों के मौक़े पर हमें तोहफ़े दिया करती है। क्या हम उनमें से कुछ खा सकते हैं?" तो आइशा (रज़ि.) ने फ़रमाया: "जो गोशत उस दिन के नाम पर ज़बह किया गया हो, उसे न खाओ, अलबत्ता उनके दरख़्तों के फल खा सकते हो।"

But anyone who is forced to eat it –

लेकिन जो शख्स उसे खाने पर मजबूर हो जाए।

'Anyone who is forced' means 'compelled by need.' It is Form VIII from *darūrah* (necessity). Forcing can be either by physical force exerted by a wrongdoer or compulsion due to extreme hunger. That is the position of most *fuqahā'* and

"जो मजबूर हो जाए" से मुराद है: वह शख्स जिसे ज़रूरत ने मजबूर कर दिया हो। अरबी में यह "ज़रूरत" से बाब-ए-इफ़्तिआल का सिगा है। यह मजबूरी दो तरह की हो सकती है: या तो किसी ज़ालिम की जिस्मानी ज़बरदस्ती से, या शदीद भूख और इज़्तिरार की वजह से। अक्सर

scholars regarding the meaning of the āyah: that it is someone who is compelled by need and hunger to do that. That is the sound position. It is said that it means that he is forced to eat forbidden things. Mujāhid said, ‘Someone can be physically forced when he is captured by the enemy and forced to eat pork and other things in disobedience to Allah. If someone is physically forced by someone to eat something unlawful, that renders it lawful for him for the duration of the time that the force is being applied.’

फुक्रहा और उलमा के नज़दीक आयत का मफ़हूम यही है कि इससे मुराद वह शख्स है जिसे ज़रूरत और भूख ने मजबूर कर दिया हो कि वह ऐसी चीज़ खाए। यही सही मौक़िफ़ है। और यह भी कहा गया है कि इससे मुराद वह शख्स है जिसे हराम चीज़ खाने पर मजबूर कर दिया जाए। मुजाहिद ने कहा: “आदमी को जिस्मानी तौर पर भी मजबूर किया जा सकता है, जैसे जब वह दुश्मन के हाथ कैद हो जाए और उसे अल्लाह की नाफ़रमानी में सूर का गोश्त या दूसरी चीज़ें खाने पर मजबूर किया जाए।” पस अगर किसी शख्स को किसी दूसरे की तरफ़ से जिस्मानी तौर पर हराम चीज़ खाने पर मजबूर किया जाए, तो जितनी देर वह ज़ब्र क़ायम रहे, उतनी मुद्दत के लिए वह चीज़ उसके लिए जायज़ हो जाती है।

Hunger can be either persistent or not. If it is persistent, there is no disagreement that it is permitted to eat one’s fill of carrion. If someone is suffering from hunger and finds the property of a Muslim, the value of which is not sufficient to cause his hand to be cut off for

भूख दो तरह की हो सकती है: या तो मुसलसल / बरकरार रहने वाली हो, या आरिज़ी हो। अगर वह मुसलसल हो, तो इस बात में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि ऐसे शख्स के लिए मुर्दार से पेट भर कर खाना जायज़ है। लेकिन अगर कोई शख्स भूख का शिकार हो और उसे किसी मुसलमान की ऐसी

theft and will cause no annoyance to the owner, such as some dates hanging from a tree, a sheep astray in the mountains and the like, it is not lawful for him to then eat carrion. There is no disagreement about this because of the ḥadīth reported by Abū Hurayrah who said, ‘Once, when we were with the Messenger of Allah ﷺ on a journey we saw some camels tied to the branches of some trees. We went to them but the Messenger of Allah called to us and we returned to him. He said, “These camels belong to people from a Muslim house. After Allah, it is their strength and fortune. Would you like to return to your bags of provisions and find them gone? Do you think that that would be fair?” “No,” we replied. He said, “This is the same situation.” We asked, “And if we need food and drink?” He said, “Eat but do not take anything away with you. Drink but do not take anything away

मिल्कियत मिल जाए जिस की क्रीमत इतनी न हो कि चोरी पर हाथ काटने की हद जारी हो, और उसे लेने से मालिक को ख़ास ज़रर या मशक्कत भी न पहुँचती हो — जैसे दरख़्त पर लटकी हुई कुछ खजूरें, या पहाड़ों में भटकी हुई कोई बकरी और इसी तरह की दूसरी चीज़ें — तो उसके लिए मुर्दार खाना जायज़ नहीं। इस मसले में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं, क्योंकि अबू हु़रैरा (रज़ि.) की रिवायत कर्दा हदीस में है, उन्होंने कहा: “एक मर्तबा हम रसूलुल्लाह ﷺ के साथ सफ़र में थे कि हमने कुछ ऊँट देखे जो दरख़्तों की शाख़ों से बंधे हुए थे। हम उनकी तरफ़ गए, लेकिन रसूलुल्लाह ﷺ ने हमें आवाज़ दी, तो हम आप ﷺ के पास वापस आ गए। आप ﷺ ने फ़रमाया: ‘ये ऊँट एक मुसलमान घराने के लोगों के हैं। अल्लाह के बाद यही उनकी कुव्वत और उनकी रोज़ी / खुशहाली का ज़रिया हैं। क्या तुम यह पसंद करोगे कि तुम अपने ज़ाद-ए-राह के थैलों की तरफ़ वापस आओ और उन्हें ग़ायब पाओ? क्या तुम समझते हो कि यह इंसाफ़ होगा?’ हमने कहा: ‘नहीं।’ आप ﷺ ने फ़रमाया: ‘तो यह भी इसी तरह है।’ हमने अर्ज़ किया: ‘और

| | |
|---|--|
| <p>with you.” Ibn Mājah transmitted it. Ibn Mājah said, ‘I believe this to be the basic principle.’</p> | <p>अगर हमें खाने-पीने की ज़रूरत हो?’ आप ﷺ ने फ़रमाया: ‘खा लो, लेकिन अपने साथ कुछ ले कर न जाओ। और पी लो, लेकिन अपने साथ कुछ ले कर न जाओ।’” इसे इब्न माजह ने रिवायत किया है। और इब्न माजह ने कहा: “मेरे नज़दीक यही इस बाब का बुनियादी उसूल है।”</p> |
| <p>Ibn al-Mundhir said, ‘We asked, “Messenger of Allah, what is lawful for someone to take from his brother’s property if he is compelled by hunger?”’ He replied, “He should eat but not take anything away, and drink but not take anything away.” Ibn al-Mundhir said, ‘After that, everyone who disagrees about that is referred to Allah’s prohibition of property.’</p> | <p>इब्न अल-मुन्ज़िर ने कहा: “हमने पूछा: ‘ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ! अगर किसी शख्स को भूख ने मजबूर कर दिया हो, तो अपने भाई के माल में से उसके लिए क्या चीज़ लेना जायज़ है?’” आप ﷺ ने फ़रमाया: “वह खा ले, लेकिन अपने साथ कुछ न ले जाए, और पी ले, लेकिन अपने साथ कुछ न ले जाए।” इब्न अल-मुन्ज़िर ने कहा: “इसके बाद जो शख्स इस मसले में इख़्तिलाफ़ करे, उसे अमवाल की हुरमत के बारे में अल्लाह के हुक्म की तरफ़ लौटाया जाएगा।”</p> |
| <p>Abū ‘Umar said, ‘The predominant position is that it is incumbent on a Muslim to preserve the life of another Muslim. It is an individual obligation for him unless</p> | <p>अबू उमर ने कहा: “ग़ालिब और राजिह मौक़िफ़ यह है कि एक मुसलमान पर दूसरे मुसलमान की जान बचाना वाजिब है। यह उस पर फ़र्ज़-ए-ऐन है, जब तक कोई दूसरा इस ज़िम्मेदारी को अदा न कर दे।</p> |

someone else takes care of it. He can fight the one who refuses to allow him to do that, even if that might prove fatal. According to the people of knowledge, that is the case if he is the only one available. Then it is an individual obligation for him. If there are several of them or a group, then that is a group (kifāyah) obligation for them. Water in that and other cases is what one can take from another. They do, however, disagree about the obligation of paying for the thing which will save his life. Some make it obligatory and others do not. Both views are found in our School. There is no disagreement among the people of knowledge, past and present, about the obligation of saving life through something insignificant, which is no loss to the owner, when it is feared that someone will die.'

अगर कोई शख्स उसे ऐसा करने से रोके, तो वह उससे क़िताल भी कर सकता है, अगरचे उसमें जान जाने का अंदेशा हो। अहल-ए-इल्म के नज़दीक यह हुक्म उस वक़्त है जब वही एक शख्स मौजूद हो। इस सूरत में यह उस पर फ़र्ज़-ए-ऐन होगा। लेकिन अगर कई लोग हों या एक जमाअत हो, तो फिर यह उन पर फ़र्ज़-ए-किफ़ाय़ा होगा। पानी भी इस और इसी तरह के दूसरे मामलात में उन चीज़ों में शामिल है जो एक शख्स दूसरे से ले सकता है। अलबत्ता उलेमा का इस बात में इख़्तिलाफ़ है कि क्या उस चीज़ की क़ीमत अदा करना भी वाजिब है जो किसी की जान बचाने का ज़रिया बने। बाज़ ने इसे वाजिब कहा है और बाज़ ने वाजिब नहीं कहा। हमारे मज़हब में दोनों अक़वाल मौजूद हैं। और अहल-ए-इल्म, क़दीम व जदीद, के दरमियान इस बात में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि अगर किसी मामूली और ग़ैर-नुक़सानदेह चीज़ के ज़रिये किसी की जान बच सकती हो, और यह अंदेशा हो कि वह शख्स मर जाएगा, तो उसकी जान बचाना वाजिब है, बशर्ते कि उससे मालिक

| | |
|---|---|
| <p>Ibn Mājah transmitted from Abū Bakr ibn Abī Shaybah from Shabbābah, and Muḥammad ibn Bashshār and Muḥammad ibn Ja'far from Shu'bah from Abū Bishr Ja'far ibn Iyās who heard 'Abbād ibn Sharaḥbīl, a man of the Banu Ghubar, say, 'We suffered in the year of the famine and I came to Madīnah and went to one of its gardens and took an ear of corn, ground it, ate some and put some in my garment. The owner came and beat me and took the garment. I went to the Messenger of Allah ﷺ and told him. He told the man, "Why did you not feed him when he was hungry or starving? Why did you not teach him since he was ignorant?" He commanded him to return the man's garment to him and ordered a wasq or half a wasq of food for him.'</p> | <p>को कोई खास नुक़सान न हो।"***</p> <p>इब्र माजह ने अबू बक्र इब्र अबी शैबह से, उन्होंने शब्बाबह से; और मुहम्मद इब्र बशशार तथा मुहम्मद इब्र जअफ़र ने शुअबह से, उन्होंने अबू बिश्र जअफ़र इब्र इयास से रिवायत की, जिन्होंने अब्बाद इब्र शरहबील से सुना — जो बनी गुबार के एक व्यक्ति थे — कि उन्होंने कहा: "हम लोग क़हत-साली (अकाल) के साल में सख़्त तंगी में पड़ गए। मैं मदीना आया और उसके एक बाग़ में गया। वहाँ मैंने अनाज की एक बाली ली, उसे मलकर कुछ खाया और कुछ अपने कपड़े में रख लिया। इतने में बाग़ का मालिक आया, उसने मुझे मारा और मेरा कपड़ा भी ले लिया। फिर मैं रसूलुल्लाह ﷺ के पास गया और आपसे यह बात बयान की। तो आपने उस आदमी से फ़रमाया: 'जब यह भूखा था या भूख से बेहाल था, तो तुमने इसे खाना क्यों नहीं खिलाया? और जब यह जाहिल था, तो तुमने इसे सिखाया क्यों नहीं?' फिर आपने उसे हुक्म दिया कि उसका कपड़ा उसे वापस करे, और उसके लिए एक वसक या आधा वसक खाना देने का भी आदेश दिया।"</p> |
|---|---|

This is a sound ḥadīth whose men are agreed upon by Bukhārī and Muslim except for Ibn Abī Shaybah whom only Muslim has. Neither Bukhārī nor Muslim transmit anything from ‘Abbād ibn Sharaḥbīl al-Ghubarī al-Yashkurī. The only thing from him is this story from the Prophet ﷺ according to Abū ‘Umar. It negates cutting off the hand and demonstrates the proper behavior in case of famine.

यह एक सहीह हदीस है, जिसके तमाम रावी इमाम बुखारी और इमाम मुस्लिम — दोनों — के यहाँ मक़बूल हैं, सिवाय इब्न अबी शैबह के, जिनसे सिर्फ़ इमाम मुस्लिम ने रिवायत ली है। हाँ, अब्बाद इब्न शरहबील अल-गुबारी अल-यशकुरी से न इमाम बुखारी ने और न इमाम मुस्लिम ने कोई और रिवायत नक़ल की है। अबू उमर के मुताबिक, उनसे बस यही एक वाक़िआ नबी ﷺ से मर्वी है। यह रिवायत हाथ काटने की सज़ा को नफ़ी करती है और यह भी बताती है कि क़हत (अकाल) के हालात में सही रवैया क्या होना चाहिए।

Abū Dāwud transmitted from Samurah that the Prophet ﷺ said, ‘When one of you comes to a flock and the owner is there, he should ask his permission to milk and drink. If no one is there, he should shout three times. If the person comes, he asks permission. If not, he may milk a ewe and drink but may not take anything with him.’ At-Tirmidhī mentioned from Yahyā ibn Sulaym from

अबू दाऊद ने समुरह से रिवायत किया है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: “जब तुम में से कोई किसी बकरी या भेड़ों के रेवड़ के पास आए और उसका मालिक वहाँ मौजूद हो, तो उसे चाहिए कि दूध निकालकर पीने के लिए उसकी इजाज़त माँगे। अगर वहाँ कोई न हो, तो वह तीन बार आवाज़ लगाए। अगर कोई आ जाए, तो उससे इजाज़त ले। और अगर कोई न आए, तो वह एक बकरी का दूध निकालकर पी सकता है, लेकिन अपने साथ कुछ लेकर न जाए।” और

‘Ubaydullāh from Nāfi’ from Ibn ‘Umar that the Prophet ﷺ said, ‘If someone enters a garden, he can eat but not take any food away.’ He said that this is a gharīb ḥadīth which we only know from Yaḥyā ibn Sulaym. He mentioned from ‘Amr ibn Shu‘ayb from his father from his grandfather that the Prophet ﷺ was asked about hanging fruit and he said, ‘If someone takes what he needs (from hanging fruit) and does not take any away, he has done nothing wrong.’ He said that it is a ḥasan ḥadīth. ‘Umar said, ‘When one of you goes past a garden, he can eat but not take any away in a container.’ The term used for this refers to something in which a person carries something in but it includes carrying something in one’s hands or on one’s back. Abū ‘Ubayd said, ‘This ḥadīth means that there is an allowance for someone who is compelled by hunger and has nothing with which to purchase food, but he may only carry

तिर्मिज़ी ने याह्या इब्न सुलैम से, उन्होंने उबैदुल्लाह से, उन्होंने नाफ़ि से, उन्होंने इब्न उमर से रिवायत किया है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: “अगर कोई किसी बाग़ में दाख़िल हो, तो वह खा सकता है, लेकिन अपने साथ कोई चीज़ लेकर न जाए।” तिर्मिज़ी ने कहा कि यह ग़रीब हदीस है, और हम इसे सिर्फ़ याह्या इब्न सुलैम की रिवायत से जानते हैं। इसी तरह उन्होंने ‘अम्र इब्न शुऐब से, उन्होंने अपने वालिद से, उन्होंने अपने दादा से रिवायत किया कि नबी ﷺ से दरख़्त पर लगे हुए फलों के बारे में पूछा गया, तो आपने फ़रमाया: “अगर कोई अपनी ज़रूरत भर ले ले और अपने साथ कुछ लेकर न जाए, तो उसने कोई गुनाह नहीं किया।” तिर्मिज़ी ने कहा कि यह हसन हदीस है। और उमर ने कहा: “जब तुम में से कोई किसी बाग़ के पास से गुज़रे, तो वह खा सकता है, लेकिन किसी बर्तन में भरकर अपने साथ न ले जाए।” यहाँ जो लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है, उसका मतलब उस चीज़ से है जिसमें कोई आदमी कुछ उठाकर ले जाए, लेकिन इसमें हाथों में उठाकर ले जाना या पीठ पर लादकर ले जाना भी शामिल है। और अबू उबैद ने कहा: “इस हदीस का

away what is in his stomach.’

मतलब यह है कि भूख से मजबूर उस शख्स के लिए रुख्सत (छूट) है जिसके पास खाना खरीदने के लिए कुछ न हो; लेकिन वह सिर्फ उतना ही ले जा सकता है जितना उसके पेट में समा जाए।”

The fundamental principle which is agreed upon regarding this is that the property of other people is forbidden unless they are content to let it be used. That was a custom that was followed in the beginning of Islam and that now exists in some countries. Then it is permitted. That is also applied in times of hunger and dire need as we already stated. Allah knows best.

इस मसले में बुनियादी उसूल, जिस पर इत्तिफ़ाक़ है, यह है कि दूसरों का माल लेना या इस्तेमाल करना हराम है, जब तक कि वे खुद उसकी इजाज़त और रज़ामंदी न दें। हाँ, इस्लाम के शुरुआती दौर में कुछ जगहों पर ऐसा रिवाज था कि लोग इस तरह की चीज़ों में ढील देते थे, और आज भी कुछ मुल्कों में ऐसा रिवाज पाया जाता है। तो ऐसी सूरत में इसकी इजाज़त होगी। इसी तरह भूख और सख्त मजबूरी के हालात में भी यही हुक्म लागू होगा, जैसा कि हम पहले बयान कर चुके हैं। अल्लाह बेहतर जानता है।

If the second case exists at a certain time, scholars have two different views about it. One is that someone may eat carrion until he is full and he is permitted to take provision from it if he fears need ahead

अगर दूसरी सूरत किसी खास वक़्त में पेश आ जाए, तो उलमा के इसमें दो अलग-अलग क़ौल हैं। उनमें से एक क़ौल यह है कि इंसान मुरदार (मयत) को इतना खा सकता है कि उसका पेट भर जाए, और अगर उसे यह डर हो कि आगे रेगिस्तान या

in a desert or wasteland. When he later finds enough to eat, he must discard the carrion. That is the sense of what Mālik said in the Muwaṭṭa'. Ash-Shāfi'ī and most scholars say that. The proof for that is the principle that necessity removes the prohibition and so that which was forbidden becomes allowed. The extent of what amounts to need is a state of lack of food. That exists until there is food available. The ḥadīth about the whale provides textual evidence for that. When the Companions of the Prophet ﷺ returned from a journey and their provision had run out, they went to the sea coast and there rose before them on the coast something like an enormous mound. When they reached it, it was a beast called a whale. Abū 'Ubaydah, the commander, said, 'Carrion.' Then he said, 'No, we are the messengers of the Messenger of Allah ﷺ and are in the Cause of Allah. You are in need. Therefore eat.' He

वीराने में फिर ज़रूरत पड़ सकती है, तो उसके लिए उसमें से ज़ाद-ए-राह (सफ़र का खाना) साथ ले जाना भी जाइज़ है। फिर जब उसे बाद में हलाल और काफ़ी खाना मिल जाए, तो उसे वह मुरदार फेंक देना होगा। इमाम मालिक के मुवत्ता में जो बात आई है, उसका मतलब यही है। इमाम शाफ़िई और जम्हूर उलमा भी इसी के क़ाइल हैं। इसकी दलील यह है कि ज़रूरत (दारूरत) ममनूअ चीज़ को मुबाह कर देती है, इसलिए जो चीज़ पहले हराम थी, वह मजबूरी की हालत में जाइज़ हो जाती है। और ज़रूरत की हद यह है कि इंसान ऐसी हालत में हो जहाँ खाना मौजूद न हो। यह हुक्म उस वक़्त तक बाक़ी रहता है जब तक खाना मिल न जाए। इस पर व्हेल (मछली) वाली हदीस से भी नस्सी दलील मिलती है। जब नबी ﷺ के सहाबा एक सफ़र से लौट रहे थे और उनका ज़ाद-ए-राह ख़त्म हो गया, तो वे समुंदर के किनारे पहुँचे। वहाँ किनारे पर उनके सामने एक बहुत बड़े टीले जैसी चीज़ उभर आई। जब वे उसके पास पहुँचे, तो वह एक जानवर था जिसे व्हेल (बड़ी मछली) कहा जाता है। उनके अमीर अबू उबैदह ने कहा: "यह मुरदार है।"

[Jābir] said, ‘We, being three hundred, stayed with it for a month until we were plump.’ So they ate and were filled from what they believed to be carrion and took provision from it until they reached Madīnah. They mentioned that to the Messenger of Allah ﷺ and he told them that it was lawful. He asked, ‘Do you have any of its meat with you so that you can give it to us to eat?’ They sent some of it to the Messenger of Allah ﷺ and he ate it.

फिर उन्होंने कहा: “नहीं, बल्कि हम रसूलुल्लाह ﷺ के भेजे हुए लोग हैं और अल्लाह की राह में हैं। और तुम लोग मजबूर हो। इसलिए इसे खाओ।” जाबिर ने कहा: “हम तीन सौ आदमी थे, और हम पूरे एक महीने तक उसके साथ रहे, यहाँ तक कि हमारे जिस्म भर गए।” चुनाँचे उन्होंने उस चीज़ में से खाया, उससे पेट भरा, जबकि वे शुरू में उसे मुरदार समझते थे, और उसमें से सफ़र के लिए खाना भी साथ ले लिया, यहाँ तक कि वे मदीना पहुँचे। फिर उन्होंने यह बात रसूलुल्लाह ﷺ से बयान की, तो आपने उन्हें बताया कि वह हलाल थी। और आपने फ़रमाया: “क्या उसका कुछ गोश्त तुम्हारे पास है, ताकि तुम हमें भी खाने को दो?” तो उन्होंने उसमें से कुछ गोश्त रसूलुल्लाह ﷺ की ख़िदमत में भेजा, और आप ﷺ ने भी उसमें से खाया।

One group say that you should eat as much as is needed to sustain life. That is the position of Ibn al-Mājishūn and Ibn Ḥabīb. The people of ash-Shāfi‘ī distinguish between the state of someone resident and someone travelling. They said

एक दूसरा गिरोह यह कहता है कि इंसान को सिर्फ़ उतना ही खाना चाहिए जितना जान बचाने के लिए ज़रूरी हो। यही इब्न अल-माजिशून और इब्न हबीब का मौक़िफ़ है। और इमाम शाफ़िई के अस्थाब ने इसमें मुक़ीम (घर पर रहने वाले) और

that someone resident should eat only that amount that will sustain his life. A traveller, however, may have his fill and take provision. Then, when he finds food, he must discard the carrion. If he finds someone else in need, he should give it to him without seeking recompense. It is not permitted to sell carrion.

मुसाफ़िर के बीच फ़र्क किया है। उन्होंने कहा कि मुक़ीम शख़्स को सिर्फ़ उतना ही खाना चाहिए जिससे उसकी जान बची रहे। लेकिन मुसाफ़िर के लिए यह गुंजाइश है कि वह पेट भरकर खा ले और सफ़र के लिए कुछ साथ भी रख ले। फिर जब उसे आगे चलकर हलाल खाना मिल जाए, तो उसे वह मुरदार फेंक देना होगा। और अगर उसे रास्ते में कोई दूसरा ज़रूरतमंद मिल जाए, तो उसे चाहिए कि वह उसे यह दे दे, बिना किसी बदले या कीमत की मांग किए। और मुरदार को बेचना जाइज़ नहीं है।

If someone is physically forced to drink wine, he may drink it without dispute, but if it is on account of hunger or thirst, he should not do so. That is what Mālik said according to al-'Utbiyyah. Wine only increases thirst. That is the position of ash-Shāfi'ī. Allah completely prohibited wine but prohibited carrion provided that there is no dire necessity. Al-Abharī says, 'If wine will remove hunger or thirst from someone,

अगर किसी शख़्स को जिस्मानी तौर पर मजबूर किया जाए कि वह शराब पिए, तो वह बिला इख़्तिलाफ़ उसे पी सकता है। लेकिन अगर मामला भूख या प्यास की वजह से हो, तो उसे ऐसा नहीं करना चाहिए। यही बात इमाम मालिक ने अल-उत्बिय्या के मुताबिक़ फ़रमाई है। क्योंकि शराब तो सिर्फ़ प्यास में इज़ाफ़ा करती है। और यही इमाम शाफ़िई का भी मौक़िफ़ है। अल्लाह तआला ने शराब को बिलकुल हराम करार दिया है, जबकि मुरदार को इस शर्त के साथ हराम

he should drink it because Allah says that pigs are impure but then permits them in case of necessity. Allah calls wine an impurity and it should be included, in necessity, under the same permission as that of pigs, going by the apparent meaning which is stronger than using analogy. There must be quenching, even if only for an instant, and repelling hunger, even if it is only for a short time.'

किया है कि शदीद इज़्तिरार की हालत न हो। लेकिन अल-अबहरी कहते हैं: "अगर शराब किसी शख्स की भूख या प्यास को दूर कर दे, तो उसे पी लेनी चाहिए, क्योंकि अल्लाह तआला ने सूअर को नापाक करार दिया है, फिर भी हालत-ए-इज़्तिरार में उसे जाइज़ कर दिया है। अल्लाह तआला ने शराब को भी नापाक कहा है, इसलिए ज़रूरत की हालत में उसे भी सूअर ही की तरह उसी इजाज़त में शामिल होना चाहिए, क्योंकि ज़ाहिर-ए-नस पर अमल करना क्रियास से ज़्यादा क़वी है। शर्त यह है कि उससे प्यास बुझ जाए, अगरचे एक लम्हे ही के लिए हो, और भूख भी दफ़्अ हो जाए, अगरचे थोड़ी देर ही के लिए हो।"

Aṣḡbagħ related that Ibn al-Qāsim said, 'Someone in dire need may drink blood but not wine. He may eat carrion but not take advantage of lost camels.' Ibn Wahb also said that. He may drink urine but should not go near wine because the ḡadd punishment is obliged for it and so, because of this, the prohibition is

असबग़ ने रिवायत किया कि इब्न अल-क़ासिम ने कहा: "जो शख्स शदीद इज़्तिरार (मजबूरी) में हो, वह ख़ून पी सकता है लेकिन शराब नहीं पी सकता। वह मुरदार खा सकता है लेकिन गुमशुदा ऊँटों से फ़ायदा नहीं उठा सकता।" इब्न वहब ने भी यही बात कही है। वह पेशाब पी सकता है, लेकिन शराब के क़रीब भी न जाए, क्योंकि उस पर हद की सज़ा लाज़िम

stronger. That is the correct position for the people of ash-Shāfi'ī.

होती है, इसलिए उसकी हुरमत ज्यादा सख्त है। और यही इमाम शाफ़िई के अस्थाब के नज़दीक सहीह मौक़िफ़ है।

If someone chokes on food, is drinking wine allowed to relieve it or not? It is said that it is not, out of the fear that people will simply use that as an excuse. Ibn Ḥabīb claims that it is permitted in that instance because it is a case of necessity. Ibn al-'Arabī said, 'Someone who chokes on something is permitted to do that in respect of what is between him and Allah. As for what is between him and us, if we see him the circumstances are not hidden from us, in that we can see that he is choking on something, and so he is believed if he shows those symptoms. If he does not show them, he is given the ḥadd punishment outwardly but is safe from the punishment of Allah inwardly if it really was the case.'

अगर किसी शख्स के गले में लुक्मा फँस जाए, तो क्या उसे उसे दूर करने के लिए शराब पीना जाइज़ है या नहीं? एक क़ौल यह है कि जाइज़ नहीं, इस ख़ौफ़ से कि लोग इसे बहाना बना लेंगे। लेकिन इब्र हबीब का कहना है कि इस हालत में यह जाइज़ है, क्योंकि यह ज़रूरत की सूरत है। इब्र अल-अरबी ने कहा: "जिस शख्स के गले में कोई चीज़ फँस जाए, उसके लिए अल्लाह के साथ अपने मामले में ऐसा करना जाइज़ है। लेकिन हमारे और उसके दरमियान जो मामला है, तो अगर हम उसे देखें और हालात हम पर मख़फ़ी न हों — यानी हम देख लें कि वाक़ई उसके गले में कुछ फँस गया है — तो उन अलामात की बुनियाद पर उसकी बात मानी जाएगी। और अगर वह अलामात ज़ाहिर न हों, तो ज़ाहिरी तौर पर उस पर हद जारी की जाएगी, लेकिन अगर हक़ीक़त में मामला ऐसा ही था, तो बातिनी तौर पर वह अल्लाह के अज़ाब से महफूज़ होगा।"

If someone who is in dire need finds carrion, pork and human flesh, he may eat the carrion, because it is lawful for him in that one situation, whereas pork and human flesh never are, and so it is better to go for the lesser prohibition. Similarly, if someone is forced to have sexual intercourse with either his sister or an unrelated woman, he should choose the unrelated woman. This is the rule in respect of these judgments. He should never eat human flesh, even if that results in his death. Our scholars said that and Aḥmad ibn Ḥanbal and Dāwud related that. The evidence of Aḥmad is the words of the Prophet ﷺ: 'Breaking the bones of a corpse is like breaking them when the person is alive.' Ash-Shāfi'ī says that he should. It is not permitted to kill a dhimmī because his life is respected, or a Muslim or a captive, because he is someone else's property. If he is from the abode of war or a muḥṣan fornicator, it is

अगर कोई शख्स शदीद इज़्तिरार की हालत में मुरदार, सूअर का गोश्त और इंसानी गोश्त पाए, तो वह मुरदार खाएगा, क्योंकि वह इसी एक खास हालत में उसके लिए जाइज़ होता है, जबकि सूअर का गोश्त और इंसानी गोश्त किसी हाल में अस्लन जाइज़ नहीं होते। इसलिए कमतर हुरमत वाली चीज़ को इख्तियार करना बेहतर है। इसी तरह अगर किसी शख्स को ज़बरदस्ती इस बात पर मजबूर किया जाए कि वह अपनी बहन या किसी अजनबी औरत से हमबिस्तरी करे, तो वह अजनबी औरत को इख्तियार करेगा। इन अहकाम में यही उसूल जारी होता है। अलबत्ता इंसानी गोश्त हरगिज़ नहीं खाना चाहिए, अगरचे उसके नतीजे में उसकी मौत ही क्यों न वाक़े हो जाए। यही बात हमारे उलमा ने कही है, और इमाम अहमद बिन हंबल और दाऊद से भी यही मन्कूल है। इमाम अहमद की दलील नबी ﷺ का यह फ़रमान है: "मय्यत की हड्डी तोड़ना ऐसा ही है जैसे ज़िंदा आदमी की हड्डी तोड़ना।" लेकिन इमाम शाफ़िई कहते हैं कि वह इंसानी गोश्त खा सकता है। और ज़िम्मी को क़त्ल करना जाइज़ नहीं, क्योंकि उसकी

permitted to kill him and eat his flesh. Dāwud objected to al-Muzanī saying that and said, 'He permits eating the flesh of Prophets!' Ibn Shurayḥ overcame him by saying, 'You risk killing Prophets when you forbade them to kill unbelievers.' Ibn al-'Arabī said, 'What I consider to be sound is that a human being may only be eaten when it is absolutely certain that doing that will save a person's life.' Allah knows best.

जान मुहतरम है। इसी तरह मुसलमान को भी क़त्ल नहीं किया जा सकता, और कैदी को भी नहीं, क्योंकि वह किसी और की मिल्कियत में होता है। अलबत्ता अगर वह शख्स दारुल-हरब से हो या मुहसन ज़ानी हो, तो उसे क़त्ल करना और उसका गोश्त खाना जाइज़ है। दाऊद ने अल-मुज़नी पर इस क़ौल की वजह से एतराज़ करते हुए कहा: "इस क़ौल के मुताबिक़ तो अंबिया का गोश्त खाना भी जाइज़ हो जाएगा!" तो इब्न शुरैह ने उन पर ग़ालिब आते हुए कहा: "और तुम तो इससे भी आगे बढ़कर अंबिया के क़त्ल का दरवाज़ा खोलते हो, जब तुमने कुफ़्रार को क़त्ल करने से मना कर दिया!" इब्न अल-अरबी ने कहा: "मेरे नज़दीक सहीह बात यह है कि इंसानी गोश्त सिर्फ़ उसी वक़्त खाया जा सकता है जब यह बिलकुल यक़ीनी हो कि इससे किसी शख्स की जान बच जाएगी।" वल्लाहु अअलम।

Mālik was asked about someone compelled to eat carrion, who then finds property belonging to someone else in the form of dates, crops or sheep. He said, 'If he is safe

इमाम मालिक से उस शख्स के बारे में पूछा गया जो मुरदार खाने पर मजबूर हो, फिर उसे किसी दूसरे शख्स का माल मिल जाए, मसलन खजूरें, खेती या बकरियाँ। उन्होंने

from harm to his body, in that he will not be considered a thief, and he will be believed if he says that he only ate that to assuage his hunger and did not take any of it with him, then I prefer that to eating carrion.’ This has already been dealt with. If he fears that he will not be believed and that he will be considered to be a thief, then it is more permissible to eat the carrion in my view. In this case there is scope for eating carrion.

फ़रमाया: “अगर वह अपने जिस्म के नुकसान से महफूज़ हो — यानी उसे चोर न समझा जाए — और अगर वह यह कहे कि उसने सिर्फ अपनी भूख मिटाने के लिए खाया था और उसमें से कुछ अपने साथ नहीं ले गया, तो मेरे नज़दीक यह मुरदार खाने से ज़्यादा बेहतर है।” इस मसले पर पहले भी गुफ़्तगू हो चुकी है। लेकिन अगर उसे यह ख़ौफ़ हो कि उसकी बात पर यक़ीन नहीं किया जाएगा और उसे चोर समझ लिया जाएगा, तो मेरे नज़दीक मुरदार खाना ज़्यादा जाइज़ है। इस सूरत में मुरदार खाने की गुंजाइश मौजूद है।

Abū Dāwud related from Mūsā ibn Ismā‘īl from Ḥammād from Simāk ibn Ḥarb from Jābir ibn Samurah that a man camped in the Ḥarrah with his wife and children. A man said, ‘One of my camels has got lost. If you find it, keep it [for me]. He found it but did not find its owner. Then it became ill and his wife said, ‘Slaughter it.’ He refused and it died. She said, ‘Skin it and we can cut its meat and fat into strips and eat it.’

अबू दाऊद ने मूसा बिन इस्माईल से, उन्होंने हम्माद से, उन्होंने सिमाक बिन हरब से, उन्होंने जाबिर बिन समुरह से रिवायत किया कि: एक शख्स हर्रह में अपनी बीवी और बच्चों के साथ मुक़ीम था। एक आदमी ने उससे कहा: “मेरा एक ऊँट गुम हो गया है, अगर तुम्हें मिल जाए तो उसे मेरे लिए रोक लेना।” उसे वह ऊँट मिल गया, लेकिन उसका मालिक न मिला। फिर वह ऊँट बीमार हो गया। उसकी बीवी ने कहा: “उसे ज़बह कर लो।” उसने इनकार किया, यहाँ तक

He said, 'Not until I ask the Messenger of Allah ﷺ.' He asked him and he said, 'Do you have what is enough for you?' 'No,' he replied. He said, 'Then eat it.' Its owner came and he told him what had happened and he said, 'Why didn't you slaughter it?' He answered, 'I was embarrassed because of what you said to me.'

कि वह मर गया। बीबी ने कहा: "उसकी खाल उतार लो, ताकि हम उसके गोश्त और चर्बी को काट कर सुखा लें और खाएँ।" उसने कहा: "नहीं, जब तक मैं रसूलुल्लाह ﷺ से न पूछ लूँ।" चुनाँचे उसने आप ﷺ से पूछा, तो आप ने फ़रमाया: "क्या तुम्हारे पास कोई ऐसी चीज़ है जो तुम्हें काफ़ी हो?" उसने जवाब दिया: "नहीं।" आप ﷺ ने फ़रमाया: "तो फिर उसे खा लो।" बाद में उसका मालिक आ गया, तो उसने उसे सारा वाक़िआ बताया। उसने कहा: "तुमने उसे ज़बह क्यों न किया?" उसने जवाब दिया: "मुझे तुम्हारी बात की वजह से शर्म आ गई थी।"

Ibn Khuwayzimandād said, 'There are two proofs in this āyah. One is that someone who is in need can eat carrion, even if he does not fear dying from hunger, because the question is about sufficiency and not about fearing for your life. The second is that he can eat, be filled, store and take provision because there is permission to store it and no stipulation about merely having your fill.'

इब्र ख़ुवैज़िमंदाद ने कहा: "इस आयत में दो दलीलें हैं। एक यह कि जो शरूख़ ज़रूरतमंद हो, वह मुरदार खा सकता है, अगरचे उसे भूख से मर जाने का ख़ौफ़ न भी हो, क्योंकि यहाँ सवाल कफ़ायत का है, जान के ख़तरे का नहीं। और दूसरी यह कि वह खा भी सकता है, पेट भर भी सकता है, ज़खीरा भी कर सकता है और ज़ाद-ए-राह भी साथ ले जा सकता है, क्योंकि उसे ज़खीरा करने की भी इजाज़त दी गई है, और इसमें सिर्फ़

पेट भर लेने तक कोई क़ैद नहीं लगाई गई।”

Abū Dāwud said, ‘Hārūn ibn ‘Abdullāh related from al-Faḍl ibn Dukayn that ‘Uqbah ibn Wahb ibn ‘Uqbah al-‘Āmirī heard his father relate that al-Fukay‘ al-‘Āmirī went to the Messenger of Allah ﷺ and asked, “What carrion is lawful for us?” He asked, “What is your usual food?” He said, “A drink [of milk] in the evening (ghabūq) and another in the morning (ṣabūḥ).” Abū Nu‘aym said that ‘Uqbah explained it as a cup of milk in the morning and one in the evening. The Prophet ﷺ said, “This does not relieve hunger,” and continued, “He made carrion lawful for them in this situation.” Abū Dāwud said, “Ghabūq is at the end of the day and ṣabūḥ is at the beginning of the day.” Al-Khaṭṭābī said, “Ghabūq is evening and ṣabūḥ is morning. A cup of milk in the morning and a cup in the evening keep

अबू दाऊद ने कहा कि हारून बिन अब्दुल्लाह ने अल-फ़ज़ल बिन दुकैन से रिवायत किया कि उक़बह बिन वहब बिन उक़बह अल-आमिरी ने अपने वालिद से सुना कि अल-फुकै‘ अल-आमिरी रसूलुल्लाह ﷺ के पास आए और पूछा: “हमारे लिए कौन सा मुरदार हलाल है?” आप ﷺ ने पूछा: “तुम्हारी मामूल की ग़िज़ा क्या है?” उन्होंने कहा: “शाम को एक पीने की चीज़ (ग़बूक) और सुबह को एक और (सबूह)।” अबू नुऐम ने कहा कि उक़बह ने उसकी तफ़सीर यह की कि सुबह एक प्याला दूध और शाम एक प्याला दूध। इस पर नबी ﷺ ने फ़रमाया: “यह भूख को दूर नहीं करता”, और फिर फ़रमाया कि ऐसी हालत में उनके लिए मुरदार हलाल कर दिया गया है। अबू दाऊद ने वज़ाहत की कि ग़बूक दिन के आख़िर में और सबूह दिन के आगाज़ में होता है। ख़त्ताबी ने कहा कि सुबह व शाम एक-एक प्याला दूध आदमी को ज़िंदा और क़ायम तो रखता है, लेकिन उससे बदन पूरी तरह न सैर होता है और न मुकम्मल ग़िज़ा पाता

one alive and upright even though the body is not fully nourished or satisfied. In that day they were permitted to use carrion. So it proves that it is permitted to consume carrion until someone has the nourishment they need.” This is what Mālik believed and it is one of the two positions of ash-Shāfi‘ī. Ibn Khuwayzimandād said, “If it is permitted when they have a drink of milk morning and evening, then it is permitted to have one’s fill and take provision from it.” Abū Hanīfah, and ash-Shāfi‘ī in another view, said, “A person is only permitted to use that amount of carrion that will keep them alive.” That is what al-Muzanī believed. They said: “That is because if someone was in this state in the first place, he would not be permitted to eat any of it; so that is also the situation after he has obtained it.” Qatādah said, “He should not carry any of it away.” Muqātil ibn Ḥayyān said, “He should not seek any

है, लिहाज़ा इससे यह दलील मिलती है कि मुरदार उस वक़्त तक खाना जाइज़ है जब तक इंसान को मतलूबा ग़िज़ा हासिल न हो जाए। यही इमाम मालिक का मज़हब है और इमाम शाफ़िई के दो अक़वाल में से एक भी यही है। इब्न ख़ुवैज़िमंदाद ने कहा कि अगर सुबह व शाम दूध के एक-एक प्याले के बावजूद मुरदार जाइज़ हो जाता है, तो फिर उससे पेट भरना और ज़ाद-ए-राह लेना भी जाइज़ होगा। लेकिन इमाम अबू हनीफ़ह और इमाम शाफ़िई के दूसरे क़ौल के मुताबिक़ सिर्फ़ उतनी मिक़्दार जाइज़ है जो जान बाक़ी रख सके, और यही अल-मुज़नी का भी मौक़िफ़ है। उनका कहना है कि अगर शुरू से ही आदमी इसी हालत में हो तो उसके लिए मुरदार में से कुछ भी खाना जाइज़ न होता, लिहाज़ा मुरदार मिल जाने के बाद भी हुक्म वही रहेगा। क़तादह ने कहा कि वह उसमें से कुछ अपने साथ न ले जाए, और मुक़ातिल बिन हय्यान ने कहा कि वह तीन लुक़्मों से ज़्यादा ज़ाद-ए-राह न ले। हालांकि सहीह मौक़िफ़ इसके ख़िलाफ़ है, जैसा कि पहले बयान हो चुका है।

provision beyond three morsels.” The sound position differs from this as was already stated.

As for using any of these things for medical treatment, either in their original form or burned, Ibn Ḥabīb says that they are only permitted for medicinal use if they are altered by burning. Ibn al-Mājishūn said that burning purifies since it changes the character of the substance (as in burned bones). It is related in al-‘Utbiyyah that Mālik said that when marthak, which is made from the bones of carrion and then placed on wounds, is used, the person using it should not pray until he has washed it off. Saḥnūn said that carrion or pig should never be used for medicinal purposes since something else which is lawful can be used. This is not the case with hunger. If there is a possible replacement for carrion, when it is to assuage hunger, then the carrion should not be used.

जहाँ तक इन चीज़ों को इलाज के लिए इस्तेमाल करने का तअल्लुक है — चाहे अपनी अस्ल हालत में हों या जला कर — तो इब्न हबीब कहते हैं कि दवाई के तौर पर इनका इस्तेमाल उसी वक़्त जाइज़ है जब वे जलने की वजह से अपनी अस्ल हालत बदल चुकी हों। इब्न अल-माजिशून ने कहा कि जलाना पाक कर देता है, क्योंकि उससे मादा की हक़ीक़त और ख़ासियत बदल जाती है, जैसे जली हुई हड्डियाँ। और अल-उत्बिय्या में यह मन्कूल है कि इमाम मालिक ने फ़रमाया: “जब ‘मर्थक’ इस्तेमाल किया जाए — जो मुरदार की हड्डियों से बनाया जाता है और फिर ज़ख़्मों पर लगाया जाता है — तो उसे इस्तेमाल करने वाला शख़्स उस वक़्त तक नमाज़ न पढ़े जब तक उसे धो न ले।” और सहनून ने कहा कि मुरदार या सूअर को इलाज के मक़सद से कभी इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसके बजाय कोई और हलाल चीज़ इस्तेमाल की जा सकती है। अलबत्ता भूख का मामला इससे

| | |
|--|---|
| | <p>मुख्तलिफ़ है। अगर भूख मिटाने के लिए मुरदार का कोई मुतबादिल मौजूद हो, तो फिर मुरदार इस्तेमाल नहीं किया जाएगा।</p> |
| <p>Wine may not be used for medicinal use either, as Mālik stated, and that is also the predominant position of ash-Shāfi'ī. That was preferred by Ibn Abī Hurayrah and his people. Abū Ḥanīfah said that it is permitted to drink it for medicinal purposes but not to assuage thirst. That is preferred by Qādī at-Ṭabarī among the people of ash-Shāfi'ī. It is also the view of ath-Thawrī. Some of the Shāfi'ī Baghdādīs say that it is permitted to drink it to assuage thirst but not for medicinal purposes because the harm from thirst is immediate which is not the case with medicinal use. It is also said that it is permitted to drink it for both reasons.</p> | <p>शराब को इलाज के लिए भी इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, जैसा कि इमाम मालिक ने फ़रमाया है, और यही इमाम शाफ़िई के नज़दीक भी राजिह और ग़ालिब मौक़िफ़ है। इसी क़ौल को इब्र अबी हुरैरा और उनके अस्थाब ने भी तरजीह दी है। अलबत्ता इमाम अबू हनीफ़ह कहते हैं कि इलाज के मक़सद से शराब पीना जाइज़ है, लेकिन प्यास बुझाने के लिए जाइज़ नहीं। और इमाम शाफ़िई के अस्थाब में से क़ाज़ी तबरी ने भी इसी क़ौल को तरजीह दी है। यही इमाम सौरी का भी मौक़िफ़ है। और कुछ बग़दादी शाफ़िई उलमा कहते हैं कि प्यास बुझाने के लिए शराब पीना जाइज़ है, लेकिन इलाज के लिए जाइज़ नहीं, क्योंकि प्यास का नुक़सान फ़ौरी होता है, जबकि इलाज की ज़रूरत में वह फ़ौरी किस्म की नहीं होती। और एक क़ौल यह भी है कि दोनों सूरतों में शराब पीना जाइज़ है।</p> |
| <p>Some of the Shāfi'īs forbid</p> | <p>कुछ शाफ़िई उलमा इलाज के लिए</p> |

using anything unlawful for medicinal reasons except for camel's urine, whose use is found in the ḥadīth of the 'Uranīs. Some people forbid using anything unlawful for medicine, quoting the Prophet's words, 'Allah did not put the treatment of my community in something He made forbidden for them.' When Ṭāriq ibn Suwayd asked the Prophet ﷺ about using wine for medicine and he forbade or disliked the use of it. Ṭāriq said, 'But I am using it for medicine.' His answer was: 'It is not a remedy; it is an illness.' Muslim transmitted this in the Ṣaḥīḥ. It is possible that this is limited to necessity and it is permitted to use poison for medicine, but not to drink it. Allah knows best.

हर हराम चीज़ के इस्तेमाल को ममनूअ करार देते हैं, सिवाय ऊँट के पेशाब के, क्योंकि उसके इस्तेमाल का सबूत उरनीन वाली हदीस में मौजूद है। और कुछ लोग हर हराम चीज़ को बतौर दवा इस्तेमाल करने से मना करते हैं और इस सिलसिले में नबी ﷺ के इस फ़रमान से इस्तिदलाल करते हैं: "अल्लाह तआला ने मेरी उम्मत की शिफ़ा उस चीज़ में नहीं रखी जिसे उसने उन पर हराम किया है।" और जब तारिक़ बिन सुवैद ने नबी ﷺ से शराब को दवा के तौर पर इस्तेमाल करने के बारे में पूछा, तो आप ﷺ ने उससे मना फ़रमाया या उसे नापसंद किया। तारिक़ ने अर्ज़ किया: "मैं तो उसे दवा के लिए इस्तेमाल करता हूँ।" तो आप ﷺ ने फ़रमाया: "यह दवा नहीं है, बल्कि खुद बीमारी है।" इमाम मुस्लिम ने इसे अपनी सहीह में रिवायत किया है। और यह भी मुमकिन है कि यह हुक्म ग़ैर-ज़रूरी हालत के साथ ख़ास हो, और ज़रूरत के वक़्त ज़हर को दवा के तौर पर इस्तेमाल करना जाइज़ हो, लेकिन उसे पीना जाइज़ न हो। वल्लाहु अअलम।

without desiring it or going to excess in it –

न तो उसकी ख्वाहिश रखते हुए, और न ही उसमें हद से बढ़ते हुए

According to Qatādah, al-Hasan, ar-Rabī, Ibn Zayd and 'Ikrimah it means: 'without desiring to eat more than what is needed of it' and '...or going to excess in it' is eating it in spite of there being a substitute for it. As-Suddī said that it is without having an appetite for it or taking pleasure in it, and excess is by eating beyond taking what is necessary to satisfy one's hunger. Mujāhid, Ibn Jubayr and others said that it means 'not attacking or transgressing against the Muslims and so the bāghī and 'ādī here are considered to be highwaymen, those who rebel against the ruler, travellers who cut off ties of kinship, those who raid the Muslims and others.' This is sound.

क़तादह, हसन, रबी, इब्र ज़ैद और इक़्रिमह के नज़दीक इसका मतलब है: "उसमें से ज़रूरत से ज़्यादा खाने की ख्वाहिश न रखे", और "हद से बढ़ने" का मतलब यह है कि उसके होते हुए भी उसे खाया जाए जब उसका कोई मुतबादिल मौजूद हो। अस-सुद्दी ने कहा कि इसका मतलब है कि न उसकी तरफ़ रगाबत हो और न उसमें लज़ज़त हासिल की जाए, और हद से बढ़ना यह है कि ज़रूरत से ज़्यादा खाया जाए, यानी सिर्फ़ भूख मिटाने से बढ़कर। और मुजाहिद, इब्र जुबैर और दीगर ने कहा कि इसका मतलब यह है कि वह मुसलमानों पर ज़ियादती या हमला-आवर न हो, लिहाज़ा यहाँ बागी और आदी से मुराद वह लोग हैं जो राहज़न हों, हाकिम के खिलाफ़ बगावत करें, रिश्तेदारी तोड़ने वाले हों, मुसलमानों पर हमला करने वाले हों और इस जैसे दीगर लोग। और यही क़ौल सहीह है।

The basic linguistic meaning of the word for going to excess, bāghī, is to aim for and intend

लज़ज़ बागी (बग़य) का बुनियादी लुग़वी मानी यह है कि फ़साद का इरादा करना और उसकी तरफ़

corruption. The verb is used of a woman who is dissolute as in 24:33. Sometimes it is used for seeking something other than corruption.

क्रस्द करना। यह फ़े'ल उस औरत के लिए भी इस्तेमाल होता है जो बदकार हो, जैसा कि सूरह अन-नूर (24:33) में है। और कभी यह लफ़्ज़ किसी और चीज़ की तलब करने के मानी में भी आता है, न कि सिर्फ़ फ़साद के लिए।

The root of 'ādī is 'ādid and it is one of the words in which there has been a reversal. The basic ruling in this matter, as we have made clear, is that Allah permits, in the case of necessity, the consumption of all forbidden things if there is no possibility of obtaining permitted things.

लफ़्ज़ आदी की अस्ल आदिद है, और यह उन अल्फ़ाज़ में से है जिनमें हुरूफ़ की उलट-फेर (क़ल्ब) वाक़े हुई है। और इस मसले में बुनियादी हुक्म — जैसा कि हम वाज़ेह कर चुके हैं — यह है कि अल्लाह तआला हालत-ए-इज़्तिरार में तमाम हराम चीज़ों के इस्तेमाल को जाइज़ कर देता है, जब हलाल चीज़ों के हुसूल की कोई सूरत मौजूद न हो।

Scholars disagree about what the ruling is if criminal acts of disobedience lead to such a state of necessity, such as highway robbery or causing alarm to people in other ways. Mālik, and ash-Shāfi'ī in one of his positions, forbade using the general permission to cover such acts because Allah made the dispensation in order to help us, and it is not lawful to

उलमा का इस बारे में इख़्तिलाफ़ है कि अगर गुनाह और नाफ़रमानी वाले मुजरिमाना अफ़आल किसी शख्स को ऐसी हालत-ए-इज़्तिरार तक पहुँचा दें — जैसे राहज़नी या लोगों को दूसरे तरीक़ों से ख़ौफ़ज़दा करना — तो इस सूरत में क्या हुक्म होगा। इमाम मालिक और इमाम शाफ़िई के एक क़ौल के मुताबिक़, ऐसे शख्स के लिए इस आम रुख़सत से फ़ायदा उठाना जाइज़ नहीं, क्योंकि अल्लाह

help a rebel. If he wants to eat, let him repent and eat. Abū Ḥanīfah, and ash-Shāfi‘ī in another position, allow it. They consider the permission to be the same. Ibn al-‘Arabī said, ‘It is a wonder that someone permits that while the person is persisting in disobedience. I do not think that anyone says that. If someone does say it, it is a definite error.’

तआला ने यह रुख़्त हमारी मदद के लिए दी है, और बागी व सरकश शख़्स की मदद करना जाइज़ नहीं। लिहाज़ा अगर वह खाना चाहता है, तो पहले तौबा करे, फिर खाए। लेकिन इमाम अबू हनीफ़ह और इमाम शाफ़िई के दूसरे क़ौल के मुताबिक़, उसके लिए भी यह इजाज़त मौजूद है। उनके नज़दीक रुख़्त का हुक्म सब के लिए एकसाँ है। इब्र अल-अरबी ने कहा: “यह बड़ी अजीब बात है कि कोई शख़्स ऐसी इजाज़त दे जबकि वह शख़्स बदस्तूर नाफ़रमानी पर क़ायम हो। मेरे ख़याल में कोई साहिब-ए-इल्म ऐसा नहीं कहता। और अगर कोई यह कहे, तो यह सरीह ग़लती है।”

The sound view differs from this. Destroying a man on a journey in which he is being disobedient to Allah is worse disobedience than that in which he is involved. Allah Almighty says: ‘Do not kill yourselves.’ (4:29) This is undefined. Perhaps he may repent later and his repentance will efface what went before. Masrūq said, ‘If someone needs to eat

सहीह मौक़िफ़ इसके ख़िलाफ़ है। क्योंकि ऐसे सफ़र में किसी शख़्स को हलाक होने के लिए छोड़ देना, जिसमें वह अल्लाह की नाफ़रमानी कर रहा हो, खुद उस नाफ़रमानी से भी ज़्यादा बड़ी नाफ़रमानी है जिसमें वह मुब्तला है। अल्लाह तआला फ़रमाता है: “अपने आप को क़त्ल न करो।” (अन-निसा: 29) और यह हुक्म आम और मुतलक़ है। मुमकिन है कि वह शख़्स बाद में तौबा कर ले

carrion, blood, and pork, and then does not eat it and dies as a consequence, he will enter the Fire unless Allah pardons him.’ Abu-l-Hasan at-Tabarī said, ‘Eating carrion in necessity is a dispensation but in his case becomes mandatory. If he refuses to eat the carrion, he becomes a rebel. Using carrion is not a dispensation connected to travelling, but is a consequence of necessity, whether someone is travelling or resident. It is like a rebel who is a resident breaking his fast due to illness or like a rebel who is travelling and who does tayammum because of the lack of water.’ He said, ‘I consider it to be sound.’

There are different transmissions from Mālik about that. According to what al-Bājī mentioned in al-

और उसकी तौबा उसके साबिक़ा गुनाहों को मिटा दे। मसरूक़ ने कहा: “अगर कोई शख्स मुरदार, खून और सूअर का गोश्त खाने का मुहताज हो, फिर वह न खाए और उसी के नतीजे में मर जाए, तो वह जहन्नम में दाख़िल होगा, इल्ला यह कि अल्लाह उसे माफ़ फ़रमा दे।” और अबुल-हसन अत-तबरी ने कहा: “हालत-ए-इज़्तिरार में मुरदार खाना अस्ल में एक रुख़सत है, लेकिन ऐसे शख्स के हक़ में यह वाजिब बन जाता है। अगर वह मुरदार खाने से इनकार करे, तो वह खुद बागी़ शुमार होगा। मुरदार का इस्तेमाल कोई ऐसी रुख़सत नहीं जो सिर्फ़ सफ़र के साथ ख़ास हो, बल्कि यह इज़्तिरार के सबब मशरूअ होती है, ख़्वाह आदमी मुसाफ़िर हो या मुक़ीम। यह उस बागी़ मुक़ीम शख्स की तरह है जो बीमारी की वजह से रोज़ा तोड़ दे, या उस बागी़ मुसाफ़िर की तरह है जो पानी न होने की वजह से तयम्मुम करे।” फिर उन्होंने कहा: “मैं इसी को सहीह समझता हूँ।”

इस बारे में इमाम मालिक से मुख़लिफ़ रिवायतें मन्कूल हैं। अल-बाजी ने अल-मुन्तक़ा में जो ज़िक़

Muntaqā, it is well known in his school that it is permitted for someone to eat carrion on a journey that entails disobedience to Allah, but it is not permitted for him to shorten the prayer or break the fast. Ibn Khuwayzimandād said, 'In respect of eating carrion due to necessity, those who are obedient and those who are disobedient are the same, because it is permitted to use carrion [out of necessity] both on a journey and while resident. Someone who departs in disobedience does not have the ruling of a resident person cancelled in his case. His situation is worse than being resident. That is not the case with breaking the fast and shortening the prayer since they are indulgences connected to travel. When the journey is one that involves disobedience, then he is not permitted to shorten the prayer in it since the indulgence is particularly connected to the journey itself. That is why we say that he can

किया है, उसके मुताबिक़ मालिकी मज़हब में मशहूर बात यह है कि जो शख्स ऐसे सफ़र में हो जिसमें अल्लाह की नाफ़रमानी पाई जाती हो, वह ज़रूरत के वक़्त मुरदार खा सकता है, लेकिन उसके लिए नमाज़ क़स्र करना या रोज़ा तोड़ना जाइज़ नहीं। और इब्न ख़ुवैज़िमंदाद ने कहा: "मुरदार खाने के मसले में, जब वह इज़्तिरार की वजह से हो, तो इताअत-गुज़ार और नाफ़रमान दोनों का हुक्म एक ही है, क्योंकि मुरदार का इस्तेमाल हालत-ए-ज़रूरत में सफ़र और हज़र दोनों में जाइज़ होता है। जो शख्स नाफ़रमानी के सफ़र पर निकला हो, उसके हक़ में मुक़ीम होने का हुक्म साक़ित नहीं होता, बल्कि उसकी हालत मुक़ीम से भी ज़्यादा सख़्त है। अलबत्ता रोज़ा तोड़ने और नमाज़ क़स्र करने का मामला ऐसा नहीं, क्योंकि ये दोनों रुख़सतें सफ़र के साथ ख़ास हैं। जब सफ़र खुद नाफ़रमानी वाला हो, तो उसमें क़स्र जाइज़ नहीं होगी, क्योंकि यह रुख़सत ख़ास उसी सफ़र के साथ मुतअल्लिक़ है। इसी लिए हम कहते हैं कि अगर नाफ़रमानी के सफ़र में पानी न हो, तो वह तयम्मूम करेगा, क्योंकि तयम्मूम का हुक्म मुक़ीम

do tayammum when he has no water during a journey of disobedience because tayammum is the same for a resident and a traveller. So how can it be possible to forbid him to eat carrion and do tayammum on account of disobedience, when not eating it would lead to death, which is the greatest form of disobedience, and not doing tayammum would lead to abandoning the prayer? Is it permitted to say that because he has committed disobedience he should commit more disobedience? Is it permitted to tell someone who drinks wine that he should also fornicate, or tell a fornicator that he should also disbelieve? Should one tell them to abandon the prayer?’ He mentioned all of this in his *Aḥkām al-Qur’ān* and he did not say anything different from that coming from Mālik or any of his people.

और मुसाफ़िर दोनों के लिए एकसाँ है। तो फिर कैसे मुमकिन है कि नाफ़रमानी की वजह से उसे मुरदार खाने और तयम्मूम करने से रोका जाए, हालाँकि मुरदार न खाने से उसकी मौत वाक़े हो सकती है — और यह सबसे बड़ी नाफ़रमानी है — और तयम्मूम न करने से नमाज़ छोड़नी पड़ेगी? क्या यह कहा जा सकता है कि चूँकि उसने एक नाफ़रमानी की है, इसलिए उसे मज़ीद नाफ़रमानियाँ भी करनी चाहिएँ? क्या शराब पीने वाले से यह कहा जा सकता है कि अब वह ज़िना भी करे? या ज़ानी से यह कहा जा सकता है कि अब वह कुफ़्र भी इख़्तियार करे? या उनसे कहा जाए कि नमाज़ भी छोड़ दें?” उन्होंने यह तमाम बातें अपनी अहकामुल-कुरआन में ज़िक्र की हैं, और उन्होंने इसके खिलाफ़ इमाम मालिक या उनके अस्थाब से कोई और बात नक़ल नहीं की।

Al-Bājī said, ‘Ziyād ibn ‘Abd ar-Raḥmān al-Andalusī said

अल-बाजी ने कहा: “ज़ियाद बिन अब्दुर्रहमान अल-अंदलुसी का

that someone who is disobedient on a journey should shorten the prayer and break the fast in Ramaḍān. He considers all of that to be the same. That is also the position of Abū Ḥanīfah. There is no disagreement that he is not permitted to kill himself by not eating [carrion] and that he is commanded to eat it as an obligation. If someone is on a journey for a disobedient purpose, the obligations and duties of the prayer and fasting are not cancelled for him. He is commanded to perform them. That is as we have mentioned. The meaning behind the first view is that these precepts are permitted on journeys when people are in need of them. One is not, however, permitted to use them to facilitate disobedience. He has a way to avoid killing himself.’

कहना था कि जो शख्स नाफ़रमानी के सफ़र में हो, वह नमाज़ क़स्र भी करेगा और रमज़ान में रोज़ा भी तोड़ेगा। उनके नज़दीक यह सब अहकाम एक ही दर्जे के हैं। और यही इमाम अबू हनीफ़ह का भी मौक़िफ़ है। और इसमें कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि ऐसे शख्स के लिए यह जाइज़ नहीं कि वह मुरदार न खा कर अपने आप को हलाक कर ले, बल्कि उसे बतौर-ए-वुजूब मुरदार खाने का हुक्म दिया जाएगा। अगर कोई शख्स नाफ़रमानी के मक़सद से सफ़र में हो, तो उससे नमाज़ और रोज़े के फ़राइज़ व वाजिबात साक़ित नहीं होते, बल्कि उसे उनकी अदायगी का हुक्म दिया जाता है। और यही बात हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं। पहले क़ौल के पीछे अस्ल मानी यह है कि यह रुख़्सतें सफ़र में उस वक़्त दी जाती हैं जब लोग उनके मुहताज हों। लेकिन इन रुख़्सतों को नाफ़रमानी में आसानी पैदा करने के लिए इस्तेमाल करना जाइज़ नहीं। और उसके पास अपने आप को हलाक होने से बचने का रास्ता मौजूद है।”

Ibn Ḥabīb said, ‘That is so that he can repent. Then he uses the

इब्र हबीब ने कहा: “यह इस लिए है ताकि वह तौबा कर ले, फिर अपनी

carrion after his repentance.’ Ibn Ḥabīb connected that to Allah’s words: ‘...without desiring it or going to excess in it.’ So he stipulated that the permission to use carrion is dependent on not being bāghī. A traveller who is involved in brigandage, highway robbery or severing ties of kinship is ‘bāghī’ and going to excess and therefore does not possess the precondition for its being allowed.

तौबा के बाद मुरदार इस्तेमाल करे।” और इब्न हबीब ने इस बात को अल्लाह तआला के इस फ़रमान से जोड़ा: “...न उसकी ख़्वाहिश रखते हुए, और न ही उसमें हद से बढ़ते हुए”। लिहाज़ा उन्होंने यह शर्त लगाई कि मुरदार इस्तेमाल करने की इजाज़त इस बात पर मौकूफ़ है कि आदमी ‘बागी’ न हो। पस वह मुसाफ़िर जो डाका ज़नी, राहज़नी या क़त्अ-ए-रहमी में मुब्तला हो, ‘बागी’ और ‘हद से बढ़ने वाला’ शुमार होगा, और इस लिए उसके अंदर मुरदार के जाइज़ होने की बुनियादी शर्त मौजूद नहीं होगी।

This is a deduction based on an understanding which differs from what those who understand fundamental principles believe. The construction of the āyah means that the one who is forced does not desire it and is not going to excess and therefore commits no sin in that respect. Allah is silent about others. The basic principle is that it is undefined. If someone claims that a matter is removed then he must offer

यह एक इस्तिनबात है जो ऐसी फ़हम पर मबनी है जो उसूल-ए-फ़िक्ह के माहिरीन की फ़हम से मुख्तलिफ़ है। आयत की तरकीब का मतलब यह है कि जो शख्स मजबूर हो, वह न उसकी ख़्वाहिश रखता हो और न उसमें हद से बढ़ता हो, तो इस एतिबार से उस पर कोई गुनाह नहीं। और अल्लाह तआला ने दूसरों के बारे में ख़ामोशी इख़्तियार की है। और बुनियादी उसूल यह है कि हुक्म अपनी अस्ल हालत पर ग़ैर-मुतअय्यन रहता है। लिहाज़ा अगर

| | |
|--|---|
| <p>proof.</p> | <p>कोई यह दावा करे कि इस मामले को अस्ल हुक्म से निकाल दिया गया है, तो उस पर दलील पेश करना लाज़िम होगा-</p> |
| <p>Allah is Ever-Forgiving, Most Merciful.</p> | <p>बे शक अल्लाह बहुत बख़्शने वाला, निहायत रहम फ़रमाने वाला है।</p> |
| <p>Allah forgives acts of disobedience and so He is more likely to forgive something He has given dispensation for. Part of His mercy is to grant dispensations.</p> | <p>अल्लाह तआला नाफ़रमानियों को माफ़ फ़रमा देता है, तो जिस चीज़ की उसने खुद रुख़्त दी हो, उसके माफ़ करने का इमकान और भी ज़्यादा है। और उसकी रहमत का एक मज़हर यह भी है कि वह रुख़्तें अता फ़रमाता है।</p> |
| <p>Those who conceal what Allah has sent down of the Book and sell it cheap, take nothing into their bellies but the Fire. On the Day of Rising Allah will not speak to them or purify them. They will have a painful punishment. [2:174]</p> | <p>जो लोग अल्लाह की नाज़िल की हुई किताब को छुपाते हैं और उसे थोड़ी क़ीमत पर बेच देते हैं, वे अपने पेटों में आग के सिवा कुछ नहीं भरते। क़ियामत के दिन अल्लाह न उनसे बात करेगा और न उन्हें पाक करेगा, और उनके लिए दर्दनाक अज़ाब होगा। [2: 174]</p> |
| <p>Those who conceal what Allah has sent down of the Book</p> | <p>जो लोग अल्लाह की नाज़िल की हुई किताब को छुपाते हैं</p> |
| <p>These are the Jewish scholars</p> | <p>यह यहूदी उलमा हैं जिन्होंने तौरात</p> |

who concealed the part of the Torah Allah revealed containing the description of Muḥammad ﷺ and the truth of his Message. The word ‘anzala’ (sent down) here means ‘disclosed’ as in 6:93. It is also said that it means ‘revealed’, which is its usual meaning.

के उस हिस्से को छुपाया जिसे अल्लाह ने नाज़िल किया था और जिसमें नबी मुहम्मद ﷺ की सिफ़ात और आपकी रिसालत की सच्चाई बयान की गई थी। यहाँ लफ़्ज़ “अंज़ला” (नाज़िल किया) का मानी “ज़ाहिर करना” या “खोल कर बयान करना” भी लिया गया है, जैसा कि (6:93) में है। और यह भी कहा गया है कि इसका मतलब “वही करना” है, जो कि इसका मअरूफ़ और आम मानी है।

and sell it cheap,

और उसे थोड़ी क़ीमत पर बेच देते हैं

They do this by accepting bribes. The word ‘cheap’ is used because what they receive will soon disappear and its result is evil. It is also said to mean that the amount of the bribe was small.

वे यह काम रिश्वत लेकर करते हैं। लफ़्ज़ “थोड़ी” इस लिए इस्तेमाल हुआ है कि जो कुछ वे हासिल करते हैं वह बहुत जल्द ख़त्म हो जाने वाला है, और उसका अंजाम बुरा है। और यह भी कहा गया है कि इससे मुराद यह है कि रिश्वत की मिक़दार ख़ुद भी बहुत कम थी।

take nothing into their bellies but the Fire.

वे अपने पेटों में आग के सिवा कुछ नहीं भरते।

This indicates the reality of the consumption since the metaphor of actual eating is

यह उस खाने की हक़ीक़त की तरफ़ इशारा करता है, क्योंकि यहाँ हक़ीक़ी खाने के इस्तिआरे को इस्तेमाल किया

used. The use of the word ‘bellies’ also alludes to their greed and the fact that they have sold the Next World for their portion of food in this one. The fact that they will go to the Fire is because they consumed something which is unlawful and for which Allah will, therefore, punish them. Consuming a bribe is called ‘fire’ because it leads to the Fire. That is what most commentators say. It is said that it is literally fire in their bellies that they will consume as a punishment.

गया है। और लफ़्ज़ “पेट” का इस्तेमाल उनकी हिर्स व लालच की तरफ़ भी इशारा करता है, और इस बात की तरफ़ भी कि उन्होंने दुनिया की थोड़ी सी गिज़ा के बदले आखिरत को बेच दिया। उनके आग में जाने की वजह यह है कि उन्होंने हराम चीज़ खाई, और इसी बुनियाद पर अल्लाह तआला उन्हें सज़ा देगा। रिश्वत खाने को “आग” इस लिए कहा गया है कि वह इंसान को आग तक पहुँचाती है। यही बात अक्सर मुफ़स्सिरीन ने कही है। और यह भी कहा गया है कि इससे मुराद हक़ीक़तन आग ही है, जो बतौर-ए-सज़ा उनके पेटों में भरी जाएगी।

On the Day of Rising Allah will not speak to them

क्रियामत के दिन अल्लाह उनसे बात नहीं करेगा

This denotes Allah’s anger with them and the removal of His pleasure from them. When someone is angry with someone it is said that he does not speak to him. At-Ṭabarī said that it means that He will not speak to them saying what they love to hear. We find in the Revelation: ‘Slink away into it and do not speak to Me.’

यह अल्लाह तआला के उन पर ग़ज़ब और अपनी रज़ा के ज़ाइल होने की तरफ़ इशारा करता है। क्योंकि जब कोई किसी पर नाराज़ होता है तो कहा जाता है कि वह उससे बात नहीं करता। इमाम तबरी ने कहा कि इसका मतलब यह है कि अल्लाह उनसे वह बात नहीं करेगा जो उन्हें पसंद हो। और वही में आता है: “उसमें ज़लील होकर पड़े रहो और

| | |
|--|---|
| <p>(23:108) It is said that it means He will not send them angels with greeting.</p> | <p>मुझसे बात न करो।” (23:108) और यह भी कहा गया है कि इसका मतलब यह है कि अल्लाह उनके पास सलाम के साथ फ़रिश्ते नहीं भेजेगा।</p> |
| <p>or purify them.</p> | <p>और न ही उन्हें पाक करेगा।</p> |
| <p>This means that Allah will not rectify their wrong actions and so purify them. Az-Zajjāj says, ‘He will not praise them or call them pure.’ In Ṣaḥīḥ Muslim, Abū Hurayrah reported that the Messenger of Allah ﷺ said, ‘There are three people that Allah will not speak to on the Day of Rising, or purify, or look at, and they will have a painful punishment: an aged adulterer, a lying ruler and a poor person who is arrogant.’ These are singled out for painful punishment and intense torment for pure obstinacy in wrong action and making light of the things which move them to commit these acts of disobedience, since need did not instigate them to do these things nor did necessity bring them to do them, as might be</p> | <p>इसका मतलब यह है कि अल्लाह तआला उनके बुरे आमाल की इस्लाह नहीं करेगा, और इस तरह उन्हें पाक नहीं करेगा। ज़ज्जाज कहते हैं: “अल्लाह न उनकी तारीफ़ करेगा और न ही उन्हें पाक करार देगा।” और सहीह मुस्लिम में अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: “तीन लोग ऐसे हैं जिनसे अल्लाह क़ियामत के दिन न कलाम करेगा, न उन्हें पाक करेगा, न उनकी तरफ़ नज़र-ए-रहमत फ़रमाएगा, और उनके लिए दर्दनाक अज़ाब होगा: एक बूढ़ा ज़ानी, एक झूठा हुक्मरान, और एक तकब्बुर करने वाला फ़क़ीर।” इन लोगों को खुसूसी तौर पर दर्दनाक अज़ाब और सख़्त तरीन सज़ा के लिए इस लिए मख़सूस किया गया है कि उनकी नाफ़रमानी महज़ सरकशी, ज़िद और हल्का समझने की बुनियाद पर थी, क्योंकि न उनकी ज़रूरत ने</p> |

| | |
|--|---|
| <p>the case with others. In the ḥadīth ‘He will not look at them,’ it means that He will not show them mercy or be kind to them.</p> | <p>उन्हें इन गुनाहों पर उभारा था, और न ही किसी इज़्तिरार ने उन्हें इस पर मजबूर किया था, जैसा कि कुछ दूसरे लोगों के मामले में हो सकता है। और हदीस में जो आया है: “अल्लाह उनकी तरफ़ नज़र नहीं फ़रमाएगा”, उसका मतलब यह है कि अल्लाह उन पर रहम नहीं फ़रमाएगा और न उनके साथ लुत्फ़ व करम का मामला करेगा।</p> |
| <p>Those are the ones who have sold guidance for misguidance and forgiveness for punishment. How steadfastly they will endure the Fire! [2:175]</p> | <p>यही वह लोग हैं जिन्होंने हिदायत के बदले गुमराही, और बख़्शिश के बदले अज़ाब ख़रीद लिया। पस ये आग पर कैसे सब्र करने वाले हैं! [2:175]</p> |
| <p>Punishment follows misguidance as forgiveness follows the guidance that they have cast aside. ‘Selling’ is used metaphorically.</p> | <p>अज़ाब, गुमराही के नतीजे में आता है, जैसे बख़्शिश उस हिदायत के साथ आती है जिसे उन्होंने छोड़ दिया। और यहाँ “बेचने” का लफ़्ज़ मजाज़न इस्तेमाल हुआ है।</p> |
| <p>How steadfastly they will endure the Fire!</p> | <p>ये आग पर किस क़दर सब्र करने वाले हैं!</p> |
| <p>Most commentators, including al-Ḥasan and Mujāhid, say that the particle mā in this phrase is used to connote wonder and refers to creatures. It is as if</p> | <p>अक्सर मुफ़स्सिरीन, जिनमें हसन बसरी और मुजाहिद शामिल हैं, कहते हैं कि इस इबारत में लफ़्ज़ “मा” तअज्जुब के लिए आया है और</p> |

Allah were saying, ‘They wonder at how steadfast they are in remaining in the Fire!’ This is the meaning which Abū ‘Alī accepts. Al-Ḥasan, Qatādah, Ibn Jubayr and ar-Rabī’ said, ‘They do not have, by Allah, any steadfastness, but how bold they are towards people!’ It is a known Yemeni dialectical form. It is said that it means ‘How bold they are in actions which bring them to the Fire!’ since they do actions which lead them to the Fire. Az-Zajjāj says that it refers to the great length of time they will remain in the Fire as you say, ‘How steadfastly he endures imprisonment!’ That means that he remains in it for a long time. It is said that it means: ‘How little anxiety they display concerning the Fire!’ and so their lack of concern is steadfastness. Al-Kisā’ī and Quṭrub said, ‘How long they persist in the actions of the people of the Fire!’ It is also said that mā is interrogative and rebuke is intended by it.

मख्लूक की तरफ़ इशारा करता है, गोया अल्लाह तआला फ़रमाता है: “वह कैसे हैरत-अंगेज़ तौर पर आग में ठहरे रहने पर क़ायम हैं!”। यही मानी अबू अली ने इख़्तियार किया है। हसन, क़तादह, इब्र जुबैर और रबी’ ने कहा: “अल्लाह की क़सम! इनमें कोई सब्र नहीं, बल्कि ये लोगों के मुक़ाबले में कितने बेबाक हैं!”। यह यमनी लहजे का मअरूफ़ उस्तूब है। और यह भी कहा गया है कि इसका मतलब है: “ये उन आमाल में कितने दिलेर हैं जो इन्हें आग तक पहुँचाते हैं!” क्योंकि ये ऐसे काम करते हैं जो इन्हें जहन्नम में ले जाते हैं। ज़ज्जाज कहते हैं कि इससे मुराद यह है कि वह आग में बहुत तवील मुद्दत तक रहेंगे, जैसे कहा जाता है: “वह कैद को किस क़दर बर्दाश्त करता है!” यानी वह उसमें लंबे अरसे तक रहता है। और यह भी कहा गया है कि इसका मतलब है: “वह आग के बारे में कितनी कम फ़िक्र रखते हैं!”, तो उनकी बेफ़िक्री ही उनका सब्र बन गई है। किसाई और कुतरुब ने कहा: “ये अहल-ए-जहन्नम के आमाल पर कितनी देर तक क़ायम रहते हैं!” और यह भी कहा गया है कि यहाँ “मा” इस्तिफ़हामिया है और उसके

| | |
|---|--|
| <p>Ibn ‘Abbās, as-Suddī, ‘Aṭā’, and Abū ‘Ubaydah Ma‘mar ibn al-Muthannā said that. It means: ‘What makes them steadfast in doing the actions of the people of the Fire?’ It is said that this is to humiliate them and make light of them.</p> | <p>ज़रिए मलामत और सरज़निश मुराद है। यह क़ौल इब्न अब्बास, अस-सुद्दी, अता और अबू उबैदह मअमर बिन अल-मुसन्ना का है। इसका मतलब है: “कौन सी चीज़ इन्हें अहल-ए-जहन्नम के आमाल करने पर साबित-क़दम रखती है?” और यह भी कहा गया है कि इसमें उनकी तज़लील और तहक़ीर मक़सूद है।</p> |
| <p>That is because Allah has sent down the Book with truth and those who differ from the Book are entrenched in hostility. [2:176]</p> | <p>यह इस लिए है कि अल्लाह ने किताब को हक़ के साथ नाज़िल किया है, और जो लोग किताब के बारे में इख़्तिलाफ़ करते हैं वह यक़ीनन सख़्त मुख़ालफ़त में बहुत दूर निकल गए हैं। [2:176]</p> |
| <p>That is because Allah has sent down the Book with truth</p> | <p>यह इस लिए है कि अल्लाह ने किताब को हक़ के साथ नाज़िल किया है</p> |
| <p>‘That’ means ‘that judgment’, as if Allah were saying, ‘The judgment of the Fire.’ Az-Zajjāj said, ‘It implies: “The matter is that” or “That is the matter” or “That is the punishment they will have.”’ The first ‘Book’ is the Qur’an. ‘Truth’ here means evidence or truthfulness.</p> | <p>यहाँ “ज़ालिक” से मुराद “वह हुक्म” है, गोया अल्लाह तआला फ़रमा रहा है: “यह आग का हुक्म है”। ज़ज्जाज ने कहा: “इसमें यह मफ़हूम पाया जाता है कि: ‘मामला यही है’, या ‘असल बात यही है’, या ‘यही वह अज़ाब है जो उन्हें मिलेगा’।” और यहाँ पहली “किताब” से मुराद कुरआन है। जबकि यहाँ “हक़” से</p> |

| | |
|--|--|
| | <p>मुराद दलील या सच्चाई है।</p> |
| <p>and those who differ from the Book</p> | <p>और जो लोग किताब के बारे में इख्तिलाफ़ करते हैं</p> |
| <p>The 'Book' referred to here is the Torah. The Christians claim that it mentioned Jesus and the Jews denied that. It is said that their ancestors disagreed about holding to it. It is said that they disagree about what was in the Torah regarding the description of Muḥammad ﷺ and differed about that. It is said that the Qur'an is meant and those who differed from it were the unbelievers of Quraysh when some of them said that it was magic, others said that it was nothing but ancient myths, and still others said that it was forged. The meaning of 'hostility' was mentioned in the commentary on 2:137.</p> | <p>यहाँ "किताब" से मुराद तौरात है। ईसाइयों का दावा था कि तौरात में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का ज़िक्र मौजूद था, जबकि यहूदियों ने उसका इनकार किया। और यह भी कहा गया है कि उनके आबा व अजदाद खुद तौरात को मज़बूती से थामने के मामले में इख्तिलाफ़ का शिकार थे। और यह भी कहा गया है कि वह तौरात में नबी मुहम्मद ﷺ की सिफ़ात के बारे में इख्तिलाफ़ करते थे, और इसी में उनके दरमियान नज़ा' था। और एक क़ौल यह भी है कि यहाँ कुरआन मुराद है, और उससे इख्तिलाफ़ करने वाले कुरैश के कुफ़्रार थे, जिनमें से कुछ ने कहा कि यह जादू है, कुछ ने कहा कि यह सिर्फ़ पहले लोगों की कहानियाँ हैं, और कुछ ने कहा कि यह गढ़ा हुआ कलाम है। और "शिक़ाक़" (सख़्त मुखालफ़त / दुश्मनी) का मानी 2:137 की तफ़्सीर में पहले गुज़र चुका है।</p> |